अनादि-अनिधन

# जिनागम पंथ जयवंत हो

# उपासक संस्कार

जिनागम पंथ प्रकाशन

जिनागम पंथ ग्रंथमाला : ग्रंथांक–8 (5)
(स्वर्णिम विमर्शोत्सव एवं रजत संयमोत्सव वर्ष–2022–23 की मंगल प्रस्तुति)

# उपासक संस्कार

प्रस्तुति
**बा. ब्र. विशु दीदी**

**जिनागम पंथ प्रकाशन**

शास्त्रदान का पुण्य अवसर

.. शास्त्र विक्रय.. ज्ञानावरणस्यास्रवाः। श्रुतात्स्याच्छ्रुतकेवली।

शास्त्र विक्रय ज्ञानावरण कर्म के आस्रव का कारण है तथा शास्त्रदान से श्रुतकेवली होता है ऐसा आगम वाक्य है।

जिनागम पंथ ग्रंथमाला से प्रकाशित श्रुत साहित्य का विक्रय नहीं किया जाता। सभी स्वाध्यायी जीवों के लिए निःशुल्क उपलब्ध कराया जाता है।


जिनागम पंथ ग्रंथमाला : ग्रंथांक–8 (5)

कृति : उपासक संस्कार

आशीर्वाद : शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनिराज

: भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनिराज

समावलोकन : आर्यिका विमलांतश्री माताजी

प्रस्तुति : बा.ब्र. विशु दीदी

संस्करण : प्रथम–2021, द्वितीय–2022, तृतीय–2022 चतुर्थ–2022, पंचम–2023

प्रकाशक : जिनागम पंथ प्रकाशन



© जिनागम पंथ प्रभावना फाउंडेशन


शास्त्र दान कर्ता

श्रीमती बसन्त जैन
विकास जैन–श्रीमती स्वीटी जैन
सार्थक ईन, स्वस्ति जैन
II-A/125, नेहरु नगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)

प्राप्ति स्थान :

जिनागम पंथ ग्रंथालय
बड़ा जैन मंदिर, बाराबंकी (उ.प्र.)
नमन जैन मो. 9160855511

जिनागम पंथ ग्रंथालय
छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मो. 9425146667

जिनागम पंथ ग्रंथालय
श्री महावीर दि. जैन मंदिर
श्रमणपुर, लखनादौन (म.प्र.)
मो. 9425146667

राष्ट्रीय विमर्श जागृति मंच
भिण्ड (म.प्र.)
मो. 9826217291

जिनागम पंथ ग्रंथालय
डॉ. विश्वजीत कोटिया
आगरा (उ.प्र.)
मो. 9412163166

जिनागम पंथ ग्रंथालय
अरिन्जय जैन
दिल्ली
मो. 9810099002

## अनुक्रमणिका


| | | |
|---|---|---|
| 1. | णमोकार महामंत्र | 17 |
| 2. | शांतिनाथ भक्ति का अतिशय | 18 |
| 3. | शांति भक्ति | 23 |
| 4. | जीवन है पानी की बूँद का उद्भव | 29 |
| 5. | जीवन है पानी की बूँद भजन | 31 |
| 6. | जानें, क्या है जिनागम पंथ? | 33 |
| 7. | जागो जागो जैनियो | 36 |
| 8. | कर तू प्रभु का ध्यान | 38 |
| 9. | शांतिनाथ कीर्तन | 40 |
| 10. | ऋण मुक्ति का वर दीजिए | 42 |
| 11. | आचार्य वंदना | 44 |
| 12. | सुप्रभातम् (आचार्य श्री विमर्शसागर जी कृत) | 50 |
| 13. | सुप्रभात स्तोत्र (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 52 |
| 14. | महावीराष्टक स्तोत्र (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 56 |
| 15. | चौबीस तीर्थंकर स्तुति (आचार्य श्री विमर्शसागर जी कृत) | 59 |
| 16. | लघु स्वयंभू स्तोत्र (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 62 |
| 17. | गोम्मटेश स्तुति (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 68 |
| 18. | पंच महागुरु भक्ति (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 71 |
| 19. | भक्तामर स्तोत्र–1,2,3 (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 74 |
| 20. | कल्याण मंदिर स्तोत्र (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 116 |
| 21. | एकीभाव स्तोत्र (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 130 |
| 22. | विषापहार स्तोत्र (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) | 142 |

23. श्री गणधरवलय स्तोत्र (आचार्य विमर्शसागर जी कृत) 151
24. श्री परमानंद स्तोत्र (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) 154
25. श्री गणधर चालीसा (आचार्य विमर्शसागर जी कृत) 161
26. सरूव थुदी (आचार्य विमर्शसागर जी कृत) 164
27. स्वरूप स्तुति (आचार्य विमर्शसागर जी कृत) 166
28. सुद्धप्पाणुवेक्खा (आचार्य विमर्शसागर जी कृत) 168
29. शुद्धात्मानुप्रेक्षा (आचार्य विमर्शसागर जी कृत) 172
30. श्रावक प्रतिक्रमण (लघु) 176
31. सामायिक पाठ (पद्यानुवाद–आ. विमर्शसागर जी कृत) 179
32. आचार्य परम्परा की अर्घावली 187
33. आचार्य श्री विरागसागर जी पूजन 189
34. आचार्य श्री विमर्शसागर जी पूजन 195
35. आरती–पंच परमेष्ठी 201
36. आरती–आचार्य श्री विमर्शसागर जी 202
37. चालीसा–आचार्य श्री विमर्शसागर जी 204
38. जिनवाणी स्तुति (आचार्य श्री विमर्शसागर जी कृत) 207
39. जैन पर्व 209
40. दैनिक रसी व्रत 210
41. जाप्य मंत्र 211
42. जिनागम पंथी आचार्य परम्परा संक्षिप्त जीवन परिचय 214
43. गुरुदेव की चेतन कृतियाँ 216
44. जिनागम पंथी श्रावक की दैनिक चर्या 217
45. श्री चौबीस तीर्थंकरों की पंचकल्याणक तिथियाँ 218
46. चौघड़िया 220



# आद्याक्षर

भारतवर्ष की सनातन संस्कृति के महोन्नत भाल पर दैदीप्यमान तिलक की भाँति चारुत्व को प्राप्त दिगम्बर जैन श्रमण परम्परा सदैव से आर्यजनों द्वारा शेषाक्षत की भाँति वंदनीय रही है। महानता को सही मायनों में जीवंत करनेवाले महनीय तपोधनों की गुणाढ्य संतति में समय–समय पर अनेकों धुरंधर जैनाचार्यों का उद्भव हुआ जिन्होंने अपनी दर्पण सम अविकार वृत्ति, अनुत्तम ज्ञान साधना एवं सुरोपासित अटल श्रद्धान् के द्वारा समय के पटल पर अपनी यश प्रशस्तियाँ अंकित की हैं। इन्ही महात्माओं के सुवंश में अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्त्व से 21वीं सदी को गौरवान्वित करनेवाले चर्या और चिंतन के धनी, साधनापथ पर कदम दर कदम अपनी साधना से अनुमार्गियों के लिये नूतन प्रकाश स्तम्भ स्थापित करनेवाले श्रमणकुल से वंदनीय, देव कुलार्चनीय परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनिराज एक असाधारण चुम्बकीय व्यक्तित्व के धनी आचार्य हैं। जिनकी परम वीतरागी सौम्यमुद्रा का दर्शन मात्र ही भव्यों के जीवन में वैराग्य का अंकुरण करनेवाला है। आपके वात्सल्य, अनुशासन और

निर्दोष चर्या से प्रभावित हो अनेकों शिवेक्षु आत्मविज्ञान के साथ मोक्षमार्ग की साधना में आपके सुपथगामी हुये हैं। आपके श्रेष्ठ निर्यापकाचार्यत्व में अनेकों श्रमण-श्रमणी एवं भव्य मुमुक्षुओं ने सल्लेखना पूर्वक उत्तम समाधि की साधना की है।

जिनका दिव्य पादमूल श्रेष्ठतम वरदानों का आनंद स्थल है, ऐसे प्रज्ञामनीषी पूज्य आचार्य श्री का यशोमयी सृजत्व भी युगपरिवर्तन की ऊर्जा से सम्पन्न है, जो दिग्भ्रमित जनमानस को समीचीन पथ का पाथेय प्रदान करता है। पूज्य आचार्य प्रवर ने अपने साहित्य में हर दृष्टिकोण से धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, पारिवारिक और मानवीय मूल्यों के समुन्नयन का संपुट प्रदान किया है। पूज्यश्री के साहित्य के हर पृष्ट पर होती है सरसता, हर लाइन में पिरो देते हैं वो रोचकता, हर शब्द करता है अंतस् को आन्दोलित और अक्षर-अक्षर में छिपा होता है जीवन विकास का परम संदेश।

**''जीवन है पानी की बूँद'' महाकाव्य-**पूज्यश्री की लेखनी से सन् 1997, भिण्ड में हिन्दी काव्यजगत का सर्वाधिक लोकप्रिय, कुरल शैली का महाकाव्य 'जीवन है पानी की बूँद' सृजित हुआ। आचार्य भगवन् की मूल कृति यह



महाकाव्य इतना अधिक लोकप्रिय है कि देश-विदेश में जैन समुदाय का कोई भी धार्मिक, सामाजिक या सांस्कृतिक कार्यक्रम हो, जबतक उसमें इस अमर काव्य की पंक्तियाँ न गुनगुनाई जायें तबतक वह अनुष्ठान अधूरा सा प्रतीत होता है।

दिगम्बर एवं श्वेताम्बर परम्परा के अनेकों साधु भगवंत, त्यागीवृन्द, विद्वान् और संगीतकार इस महाकाव्य पर नूतन-नूतन हजारों छंद लिखकर अपनी काव्य प्रतिभा को धन्य कर रहे हैं, यह इस कालजयी महाकाव्य की लोकप्रियता का एक सशक्त उदाहरण है। इस महाकाव्य पर अनेकों शोधार्थी P.H.D. कर रहे हैं। पूज्य श्री के इस महाकाव्य पर देश के मूर्धन्य जैन, अजैन विद्वानों एवं साहित्यकारों द्वारा अनेक विद्वत् संगोष्ठियाँ सम्पन्न की जा चुकी हैं।

हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, उर्दू, अंग्रेजी, राजस्थानी, हाड़ौती, बुंदेली, अवधि, आदि अनेक भाषाओं के ज्ञाता एवं हिन्दी के साथ-साथ प्राकृत, संस्कृत, उर्दू आदि अनेक भाषाओं में साधिकार कलम चलानेवाले, संत परम्परा के वरिष्ठ साहित्यकार परम पूज्यनीय भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज द्वारा जहाँ एक

ओर जैनदर्शन के अनेकों मूलग्रंथों का मौलिक छंदों में पद्यानुवाद कर आचार्य भगवन् कुंदकुंद और पूज्यपाद की परम्परा को पुष्ट किया गया है वहीं दूसरी ओर उनकी लेखनी से सृजित सैकडों बोधप्रद कवितायें, आध्यात्मिक भजन एवं सवैया, मुक्तक, हाइकू, नई कविता आदि अनेक विधाओं पर सैकड़ों प्रकीर्णक रचनायें हिन्दी काव्य परम्परा के कोष की समृद्धि बन पड़ी हैं। सिर्फ हिन्दी ही नहीं पूज्य आचार्य श्री ने उर्दू में साधिक 200 गजलों का प्रणयन कर उर्दू साहित्य में भी अद्भुत कीर्तिमान स्थापित किया है।

**अभीक्ष्ण ज्ञान साधना का अमृतफल 'अप्पोदया' प्राकृत टीका–** श्रुत संवर्धन के लिये समर्पित पूज्य आचार्य श्री की प्रज्ञ लेखनी ने पूज्य आचार्य भगवन् श्री अमितगति स्वामी कृत सहस्र वर्ष प्राचीन 'श्री योगसार प्राभृत' ग्रंथ पर प्राकृत भाषा में ''**अप्पोदया**'' नामक सहस्र पृष्ठीय वृहद टीका का सृजन कर श्रुत संस्कृति के क्षेत्र में एक स्वर्णिम इतिहास रचा है। देशभर के मूर्धन्य विद्वानों एवं श्रमण जगत के द्वारा समादृत आपकी यह ''**अप्पोदया**'' प्राकृत टीका अध्यात्म का एक वृहद कोष है, जो आपकी अभीक्ष्ण ज्ञान साधना का ही अमृतफल है।



बहु आयामी व्यक्तित्त्व के धनी पूज्य गुरुदेव के विराट कृतित्व में अनेक विधायें केली करती हैं। पूज्य आचार्यश्री ने जहाँ एक ओर अपने लेखन से आरातिय श्रुत को बल प्रदान किया है, वहीं दूजी ओर '**विमर्श लिपि**' एवं '**विमर्श अंकलिपि**' का सृजन कर समुचि श्रमण संस्कृति का मस्तक ऊँचा किया है। साथ ही पूर्णत: मौलिक शब्द, व्याकरण आदि से सम्पन्न नवीन भाषा '**विमर्श एम्बिशा**' का निर्माण कर आपने इतिहास के पृष्ठों पर एक अमिट लेख लिख दिया है।

**जैन एकता के लिये दिव्यावदान–** पूज्य आचार्य श्री ने ''**जिनागम पंथ जयवंत हो**'' का नारा देकर संतवाद पंथवाद और जातिवाद के नाम पर बिखरती जैन संस्कृति को एकता के सूत्र में बाँधने का स्तुत्य कार्य किया है।

पूज्य आचार्य श्री का काव्य सर्जना में श्रम कौशल वरेण्य है। आपकी एक प्रेरक काव्य रचना ''**देश और धर्म के लिये जिओ**'' को मध्यप्रदेश शिक्षा बोर्ड द्वारा कक्षा 11 की हिन्दी सामान्य की पुस्तक '**मकरन्द**' के पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है, यह श्रमण संस्कृति के स्वाभिमान का विषय है।

सिद्धक्षेत्र श्री अहारजी में आपश्री को अपनी निर्मल

साधना से पंचमकाल में दुर्लभतम श्री शान्तिभक्ति की महान सिद्धि प्राप्त हुई, जिससे प्रभावित हो यक्षों द्वारा की गई महापूजा और नाम दिया गया '**भावलिंगी संत**' एवं '**अहार जी के छोटे बाबा**'। यह सम्पूर्ण कथानक आपकी सच्ची भावसाधना का अमिट शिलालेख है।

दिगम्बर श्रमण परम्परा के महान प्रतिष्ठाचार्य, पूज्य आचार्य भगवन् जैसे महान् संत जगत में विरलप्राय: हैं। अनेकान्तिनी प्रतिभा के ससक्त हस्ताक्षर, प्रेम, दया, करुणा, वात्सल्य की अपरिसीम संवेदनाओं से छलकता हृदय, सरलता और सहजता का प्रतिनिधित्व करता जीवन, महानता के सर्वोच्च शिखर पर लघुता के स्वर ये पूज्य आचार्यश्री के जीवन की कुछ ऐसी दुर्लभतम विशेषतायें हैं जो उन्हें सहज ही आम संतों की भीड़ में एक जुदा संत की पहिचान देती हैं।

परम पूज्यनीय शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनिराज के अग्रगण्य शिष्यों में परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनिराज एक अद्वितीय प्रतिभाशील सहज साधक हैं। गुरुआज्ञा, अनुशासन और स्वयोग्यता से आपने अपनी निर्वाण दीक्षा के 25 वर्षों में जो कद प्राप्त किया है, वहाँ तक



कोई विरला संत ही पहुँच पाता है। आपने अपनी साधनाकाल के विगत 27 वर्षों में पूरे देश में परिभ्रमण कर अनेकों पंचकल्याणक प्रतिष्ठायें, वेदी प्रतिष्ठायें, श्री कल्पद्रुम, समोशरण, इन्द्रध्वज, सिद्धचक्र आदि वृहद स्तरीय विधान, अनेक जिनालयों का जीर्णोद्धार, संत शालाओं का निर्माण, ग्रंथालयों की स्थापना आदि कराके जिनागम पंथ का ध्वज घर-घर में स्थापित किया है।

पूज्य आचार्यश्री कहते हैं- जिनवाणी हमारी माँ है, उसपर मूल्य अंकित कर उसका विक्रय नहीं करना चाहिये। जिनवाणी का विक्रय करने से ज्ञानावरणी कर्म का आस्रव बंध होता है। अत: पूज्य आचार्य श्री की प्रेरणा से ''**जिनागम पंथ ग्रंथमाला**'' की स्थापना की गई है। इस ग्रंथमाला से प्रकाशित साहित्य साधु भगवंतों एवं स्वाध्यायी जनों के लिये नि:शुल्क भेंट किया जाता है। आचार्यश्री की यह सद्प्रेरणा निश्चित ही समाज को नया चिंतन एवं नई दिशा देगी।

आपके शुभाशीष से ''**राष्ट्रीय विमर्श जागृति मंच (रजि.)**'' एवं ''**जिनागम पंथी श्रावक संघ**'' ये दो संगठन देशभर में मानव सेवा, देशसेवा और धर्म प्रभावना के क्षेत्र में समाज की महत् उपलब्धि बन चुके हैं।

आपके सानिध्य में आयोजित, जिनागम शिक्षण शिविर, विमर्श कैम्प, पूजन प्रशिक्षण शिविर (आनंद महोत्सव), विद्वत् संगोष्ठियाँ, साहित्यकार सम्मेलन, मंच के सेमिनार आदि के माध्यम से समाज में संस्कारों का शंखनाद किया जा रहा है।

आपकी रजत साधना के ये पच्चीस वर्ष निश्चित रूप से देश, समाज, धर्म और समुचि मानवता के लिये किसी दिव्य वरदान से कम नहीं है।

अत: आपके "**रजत संयमोत्सव**" एवं "**स्वर्णिम विमर्श उत्सव**" के अवसर पर अखिल भारतीय शास्त्री परिषद, विमर्श गुरुभक्तों एवं शिष्यों ने यह भाव सँजोया है कि आपका समूचा साहित्य प्रकाशित हो ताकि जन-जन आपके अवदान से लाभान्वित हो सकें, साथ ही कुछ प्राचीन आचार्यों के मूल ग्रंथों के प्रकाशन का भी बीड़ा उठाया है। यह समूचा साहित्य प्रकाशन का कार्य "**जिनागम पंथ ग्रंथमाला**" के तहत सम्पन्न किया जा रहा है। पूज्य आचार्य श्री का यह साहित्य जन-जन के मन को आलोकित करता रहे। इसी सुमंगल भावना के साथ शब्द विराम।



चूँकि ग्रंथ प्रकाशन में संशोधन एवं संपादन का कार्य अत्यंत श्रमसाध्य है, पूज्य गुरुदेव के इस पावन युगल प्रसंग पर प्रकाशित सभी शास्त्रों की प्रूफ रीडिंग एवं साजसज्जा के कार्य में संघस्थ मुनिराज, आर्यिका मातायें, त्यागी व्रति, एवं विद्वत् वर्ग ने अपना अमूल्य समय देकर श्रुतसेवा के इस कार्य में श्लाघनीय योगदान दिया है, जो उनकी गुरुभक्ति और श्रुतभक्ति का अनुपम उदाहरण है। **जिनागम पंथ ग्रंथमाला** एवं **ग्रंथ प्रकाशन समिति** आप सभी के प्रति हृदय से आभार ज्ञापित करती है।

## परिचय की वीथिकाओं में

# भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज

## लौकिक यात्रा

| | | |
|---|---|---|
| **पूर्व नाम** | : | श्री राकेश कुमार जैन |
| **पिता** | : | पं. श्री सनत कुमार जैन (दो प्रतिमाधारी, समाधिस्थ) |
| **माता** | : | श्रीमती भगवती जैन (आपके ही कर कमलों से दीक्षित एवं समाधिस्थ पू.आर्यिका विहान्तश्री माताजी) |
| **जन्म स्थान** | : | जतारा, जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.) |
| **जन्म तिथि** | : | मार्गशीर्ष कृष्णा पंचमी सं. 2030 |
| **जन्म दिनांक** | : | 15 नवम्बर, 1973 दिन : गुरुवार |
| **शिक्षा** | : | बी.एस.सी. (बायलॉजी) |
| **भ्राता** | : | दो (अग्रज-राजेश जैन, अनुज-चक्रेश जैन) |
| **भगिनी** | : | दो (अग्रजा-श्रीमती कमला जैन, अनुजा-बा. ब्र. महिमा दीदी (संघस्थ) |
| **विवाह** | : | बाल ब्रह्मचारी |
| **खेल** | : | बैडमिंटन, शतरंज (विशेषता—दोनों खेल जिनसे सीखे उन्हीं के साथ फाईनल खेलते हुए चैंपियन कप विजेता) |
| **सामाजिक सेवा** | : | मंत्री—श्री दिगम्बर जैन नवयुवक संघ, जतारा |
| **रुचि** | : | अध्ययन, संगीत, पेंटिंग |
| **सांस्कृतिक रुचि** | : | अनेक धार्मिक, सामाजिक नाट्य मंचन |
| **करुणा भाव** | : | बचपन में एक गरीब अंधे भिखारी को अक्सर पैसे दान देना। |



## परमार्थ यात्रा

आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज के प्रथम बार जतारा नगर में आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं त्रयगजरथ महोत्सव में समाज की ओर से निवेदन के अवसर पर दर्शन हुये। आचार्यश्री की वात्सल्यता ने अत्यंत प्रभावित किया। (सन्-1995, स्थान-मोराजी सागर, म.प्र.)

**त्याग के संस्कार :** आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज की जतारा नगर में वैयावृत्ति के समय आजीवन आलू, प्याज एवं रात्रि भोजन के त्याग से गृह त्याग की भावना।

**ब्रह्मचर्य व्रत:** आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज ससंघ का विहार कराते हुए सिद्धक्षेत्र श्री अहार जी में भगवान् शान्तिनाथ की चरणछाया में फाल्गुन कृष्णा त्रयोदशी, सोमवार संवत् 2051, दिनांक 27 फरवरी 1995 को आचार्यश्री से दो वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया।

**सामायिक प्रतिमा :** आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज से पार्श्वनाथ मोक्ष सप्तमी के अवसर पर सामायिक प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। स्थान- क्षेत्रपाल जी ललितपुर (उ.प्र.), दिनांक 3 अगस्त 1995, गुरुवार।

**ऐलक दीक्षा:** फाल्गुन शुक्ला पंचमी, शुक्रवार, संवत् 2052, 23 फरवरी 1996 को देवेन्द्रनगर (पन्ना) में तपकल्याणक के दिन आचार्यश्री विरागसागरजी महाराज से ऐलक दीक्षा ग्रहण की और नाम पाया ऐलक विमर्शसागर जी।

**मुनि दीक्षा :** पौष कृष्णा 11, संवत् 2055, सोमवार दिनांक 14

दिसम्बर 1998 को अतिशय क्षेत्र बरासो (भिण्ड) में आचार्यश्री विरागसागरजी से मुनिदीक्षा ग्रहण की और मुनि विमर्शसागर नाम पाया।

**आचार्य पद घोषित:** आचार्यश्री विरागसागरजी ने 13 फरवरी 2005, रविवार को कुन्थुगिरी में गणधराचार्य श्री कुन्थुसागर जी सहित 14 आचार्य एवं 200 पिच्छिओं के मध्य आचार्य पद घोषित किया।

**आचार्य पद संस्कार :** मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी सं. 2067, रविवार, दिनांक 12 दिसम्बर 2010 को बांसवाड़ा (राजस्थान) में आचार्यश्री विरागसागरजी ने आचार्य पद के संस्कार किये और नाम दिया आचार्य विमर्शसागर जी।

**शान्ति भक्ति की सिद्धि :** 25 दिसम्बर 2015, सिद्धक्षेत्र अहार जी में भगवान् श्री शान्तिनाथ स्वामी के अतिशयकारी पादमूल में, संघस्थ बा.ब्र. विशु दीदी की असाध्य बीमारी (रोग) से करुणान्वित हो पूज्य गुरुदेव ने जब लगभग 1400 वर्ष प्राचीन आचार्य पूज्यपाद स्वामी रचित शान्त्यष्टक का भावपूर्वक पाठ किया तो देखते ही देखते क्षण मात्र में दीदी असाध्य रोग से मुक्त हो गईं। तब क्षेत्र के यक्ष-यक्षणियों द्वारा गुरुदेव की महापूजा की गई और सूचित किया कि आपको अपनी निर्मल साधना से इस पंचमकाल में दुर्लभतम शान्ति भक्ति की सहज ही सिद्धि प्राप्त हुई है। साथ ही पूज्य गुरुदेव को **'भावलिंगी संत', 'अहार जी के छोटे बाबा', 'शान्तिप्रभु के लघुनंदन'** आदि संज्ञायें प्रदान कीं।

**शब्दालंकार :** रत्नत्रय के ऊर्जस्वी और तेजस्वी अलंकारों से जिनकी आत्मा का एक-एक प्रदेश अलंकृत है। सत्यम्-शिवम्-सुंदरम्



की दिव्य रश्मियों से आलोकित पूज्य गुरुवर विमर्शसागर जी महामुनिराज का विराट व्यक्तित्व किन्हीं शब्दालंकारों का मोहताज नहीं है। फिर भी जगह-जगह की धर्मप्राण-समाजों, ऊर्जस्वी संगठनों एवं यशस्वी व्यक्तियों ने नाना अवसरों पर अपने मनोभावों को शब्दों में समेट कर गुरु चरणों में कई शब्दालंकार प्रस्तुत किये हैं और अपना सौभाग्य माना है।

**वात्सल्य शिरोमणि**—संत के जीवन का सबसे प्रभावी गुण होता है उसका अकृत्रिम वात्सल्य भाव, पूज्य गुरुवर को यह वात्सल्य की अमूल्य सम्पदा, गुरु परम्परा से विरासत में ही प्राप्त हुई है, वर्षायोग 2008 के उपरान्त उत्तरप्रदेश के आगरा नगर में पंचकल्याणक के अवसर पर आगरा समाज ने आपके वात्सल्य से प्रभावित होकर आपको **''वात्सल्य शिरोमणि''** के अलंकार से विभूषित किया।

**श्रमण गौरव**—प.पू. भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज की अनुशासन के सुडौल साँचे में ढली निर्दोष श्रमण चर्या वर्तमान में श्रमण जगत को गौरवान्वित करती है, पूज्य श्री की आगमानुसारी चर्या से प्रभावित होकर एटा-2009 वर्षायोग में शाकाहार परिषद ने आपको **''श्रमण गौरव''** की उपाधि से अलंकृत किया और अपना सौभाग्य बढ़ाया।

**वात्सल्य सिन्धु**—वात्सल्य और करुणा के दो पावन तटों के बीच प्रवाहित गुरुवर की जीवन मंदाकिनी जनमानस की सतह पर बिखरी घृणा, बैर, कटुता की कलुषता को सहज ही धो डालती है। पूज्यश्री के इसी गुण आकर्षण से अनुग्रहीत हो, एटा वर्षायोग-2009 में अखिल भारतीय कवि सम्मेलन के अवसर पर राजेश जैन गीतकार आदि कवि समूह ने गुरुवर को **''वात्सल्य सिन्धु''** का भाव वंदन अर्पित कर सौभाग्य माना।

**आचार्य पुंगव**—संतवाद, पंथवाद, जातिवाद और ग्रंथवाद की वैचारिक संकीर्णताओं से असम्पृक्त पूज्य श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महाराज की सिर्फ चर्या ही अनुकरणीय नहीं, अपितु उनका चतुरानुयोग का निर्मल ज्ञान भी ज्येष्ठ है। ऐसे ज्ञान और चर्या में श्रेष्ठ संत के महिमावंत व्यक्तित्व से प्रभावित होकर पूज्य गुरुदेव की गृहनगरी जतारा जैन समाज ने पंचकल्याणक 2012 के अवसर पर आपको "**आचार्य पुंगव**" की उपाधि से भूषित कर अपना मान बढ़ाया।

**राष्ट्रयोगी**—पूज्य गुरुवर का "**वैचारिक वैभव**" सिर्फ जैनों तक सीमित नहीं अपितु हर जाति का व्यक्ति उसे अपनी विरासत मानता है। अत: बिजयनगर (राज.) वर्षायोग-2012 में राष्ट्रवादी संस्था भारत विकास परिषद द्वारा आयोजित "दिव्य संस्कार प्रवचन माला" में आपके राष्ट्रोन्नति से समृद्ध उपदेशों को सुनकर आपको "**राष्ट्रयोगी**" का अलंकार समर्पित किया गया।

**सर्वोदयी संत**—पूज्य आचार्यश्री की निर्भीक शैली जनमानस को सहज ही अपनी ओर आकर्षित कर लेती है तभी तो पूज्यवर के प्रवचनों में जैनों के साथ-साथ अजैन भी देशना को सुनकर आनंदित होते हैं, आपके उपदेशों में प्राणीमात्र के उदय की दिव्य चमक नजर आती है, तभी तो बिजयनगर (राज.) दिगम्बर जैन समाज ने 2012 वर्षायोग में आपको "**सर्वोदयी संत**" की उपाधि से नवाजा।

**प्रज्ञामनीषी**—श्रुताराधना के अनुपम आराधक, जिनेन्द्रवाणी के गहन प्रचारक, वाणी और कलम के अनूठे जादूगर पूज्यश्री की तीक्ष्ण प्रज्ञा और निर्मल ज्ञान से प्रभावित होकर, अखिल भारतीय आध्यात्मिक कवि सम्मेलन बिजयनगर (राज.)- 2012 में कविगण एवं भारत विकास परिषद द्वारा आपको "**प्रज्ञामनीषी**" की उपाधि से विभूषित किया गया।



**राष्ट्रहितैषी**—उत्तरप्रदेश के एटा नगर में स्वामी विवेकानन्द की 150वीं जन्म जयन्ती के अवसर पर विश्व हिन्दू परिषद के तत्त्वावधान में आयोजित अखिल भारतीय युवा सम्मेलन में पूज्य गुरुदेव के राष्ट्रहित में समर्पित देशोन्नति परक अमूल्य चिंतन से प्रभावित हो विश्व हिन्दू परिषद द्वारा सन् 2013 में आपको "**राष्ट्रहितैषी**" अलंकरण से अलंकृत किया गया।

**आदर्श महाकवि**—सम्प्रतिकाल में कुरल शैली का सैकड़ों विषयों को हृदयंगम करनेवाला अमर महाकाव्य "जीवन है पानी की बूँद" के शब्दशिल्पी, भजन, ग़ज़ल, मुक्तक, कविता, नई कविता, पद्यानुवाद, सवैया आदि अनेक जटिल विधाओं पर साधिकार कलम चलानेवाले परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज के अपूर्व काव्यात्मक अवदान से प्रेरित हो, 14 नवम्बर 2016 को अखिल भारतीय आध्यात्मिक कवि सम्मेलन में, देश के ख्यातिलब्ध मूर्धन्य कवियों ने सुरेश 'पराग' के नेतृत्व में एवं पं. संकेत जी के मार्गदर्शन में सकल जैन समाज देवेन्द्रनगर की गरिमामयी अनुमोदना के संग पूज्यश्री को "**आदर्श महाकवि**" का अलंकरण भेंट कर निज सौभाग्य वर्धन किया।

**चारित्र रथी**—आत्मप्रदेशों में सच्चे भावलिंग की प्रतिष्ठा कर, आत्मरति और परविरति के साथ चारित्र रथ पर सवार हो पूज्य गुरुदेव आत्मोत्थान के सुपथ पर अबाध रीति से वर्धमान हैं। आपकी इस आत्मोन्नयन की निष्पंक चारित्र साधना से प्रभावित हो देश के वरिष्ठ साहित्यकार श्री सुरेश 'सरल' जी ने बिजयनगर चातुर्मास 2012 में आपको "**चारित्र रथी**" का अलंकरण भेंट कर स्व गौरववर्धन किया।

**जिनागम पंथ प्रवर्तक**—वर्तमान में पंथवाद, संतवाद और जातिवाद के नाम पर बिखरती दिगम्बर जैन समाज में अनादि अनिधन "**जिनागम पंथ**" का उद्घोष कर पूज्य गुरुदेव ने जैन एकता के लिये एक महनीय कार्य किया है। पूज्य गुरुदेव के इस "**जैन यूनिटी मिशन**" से प्रभावित हो सन् 2020 में श्री कल्पद्रुम महामण्डल विधान एवं गजरथ महोत्सव के सुप्रसंग पर बा.ब्र. ऋषभ भैया (नागपुर) के मार्गदर्शन में सकल दिगम्बर जैन समाज, बाराबंकी ने आपको "**जिनागम पंथ प्रवर्तक**" का अलंकरण भेंट कर आपके इस अभिनंद्य प्रयास की अभ्यर्थना की।

**राष्ट्रगौरव**—परम पूज्य भावलिंगी संत राष्ट्रयोगी श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनिराज का अनुत्तम वैदुष्य जहाँ एक ओर धर्मनीति की प्रतिष्ठा करता है वहीं दूसरी ओर आपका क्रान्तिनिष्ठ मौलिक चिंतन, राजनीति, न्याय-नीति, मानव सेवा, शाकाहार, गौरक्षा, लोकतंत्र, पारिवारिक एवं सामाजिक दायित्वों के प्रति जन जागरण कर संपूर्ण देश के लिये गौरव का विषय बन पड़ा है। पूज्य गुरूदेव के दिव्यावदानों से आज समुचा देश गौरवान्वित है। इसीलिये महमूदाबाद चातुर्मास 2021 में सम्पूर्ण अवध प्रान्त की जैन समाज की गरिमामयी उपस्थिति में कला और साहित्य की अखिल भारतीय संस्था एवं "**राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ**" के अनुसांगिक संगठन "**संस्कार भारती**" की ओर से माननीय श्री गिरीशचन्द्र मिश्र, राज्यमंत्री, उत्तरप्रदेश शासन द्वारा पूज्य गुरुदेव को "**राष्ट्रगौरव**" का अलंकरण भेंट किया गया।



## णमोकार महामंत्र

**णमो अरिहंताणं**
**णमो सिद्धाणं**
**णमो आइरियाणं**
**णमो उवज्झायाणं**
**णमो लोए सव्वसाहूणं**

**चत्तारि मंगलं-अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवली पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा-अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवली पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवली पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।**

**मंगलं भगवान् अर्हन्, मंगलं वृषभो जिनः।**
**मंगलं पूज्यपादार्यो, पंथो जिनागमोस्तु तं।।**

**जयदु जिणागम पंथो, रागद्दोसप्प णासगो सेयो।**
**पंथो तेरह – बीसो, रागादि – वड्ढिओ असेयो।।**

## गुरु मंत्र

**संकट मोचन तारण हारे, गुरु विमर्श की जय जय जय।**

# शांतिनाथ भक्ति का अतिशय

● श्रमणाचार्य विमर्शसागर

संसारी जीव एक व्यापारी की तरह है, जो नित्य शुभ और अशुभ कर्म का संचय करता है, उनका फल भोगता है। अशुभ कर्म का फल दुःख है, शुभ कर्म का फल सुख। मोक्षमार्ग शुभाशुभ कर्म से मुक्त अतीन्द्रिय सुख का साधन है। मोक्षमार्गी साधक प्रधानतया अतीन्द्रिय सुख के मार्ग का आश्रय करते हैं। कदाचित् शुभमार्ग का आश्रय कर अशुभ कर्म की शान्ति का उपाय भी करते हैं, जिनधर्म की प्रभावना करते हैं। जैसे 48 कोठरी में बंद आचार्य मानतुंग स्वामी ने आदिनाथ स्तुति की और ताले स्वयमेव खुल गये। आचार्य वादिराज स्वामी ने जिनस्तुति की और कुष्ठ रोग तत्काल ठीक हो गया। आचार्य पूज्यपाद स्वामी ने शांति स्तुति की और नेत्र ज्योति आ गई। कवि धनंजय ने आदि स्तुति की और पुत्र का विष तत्काल शान्त हो गया, पुत्र मानो सोते से जाग गया, जिनधर्म की भी महाप्रभावना हुई।

सच 25.12.2015 का दिन मैं कभी भूल नहीं सकता जब दोपहर सामायिक हेतु चतुर्दिक् कायोत्सर्ग कर मैं बैठने ही



वाला था कि 15 दिन से अत्यन्त अस्वस्थ आँचल दीदी को संघस्थ दीदियाँ व्हीलचेयर से आशीर्वाद हेतु लाईं। पैरालाइसिस जैसी शिकायत होने से पैर-हाथ से तो असमर्थता थी ही, आज आँखों से दिखना एवं कानों से सुनना भी बंद हो गया था। अत्यन्त दयनीय हालत में दीदी को देखकर हृदय करुणा से द्रवित हो उठा। मन ही मन भगवान शांतिनाथ का स्मरण कर प्रभु से बोला – 'हे नाथ! 22 वर्षीय असाध्य रोग से पीड़ित आँचल दीदी की अस्वस्थता आँखों से देखी नहीं जाती। प्रसिद्ध डॉक्टर्स भी स्पष्ट मना कर चुके हैं कि दीदी अब कभी स्वस्थ नहीं हो सकती। हमारे मेडिकल साइंस में यह प्रथम केस है कि दीदी की रिपोर्ट नॉर्मल है और अस्वस्थता बढ़ती जा रही है। हे प्रभो! अब तो एकमात्र आपकी भक्ति ही शरण है। सच्चा भक्त आपकी भक्ति के फल से जब पूर्ण निरामय अवस्था को प्राप्त कर सकता है, तो इस रोग से मुक्ति क्यों नहीं मिलेगी।' मैं अत्यन्त करुणा से भरा हुआ आँचल दीदी से बोला – बेटा! मैं तुम्हें शांतिभक्ति सुना रहा हूँ, मेरी आज की यही सामायिक है, मैं भगवान शांतिनाथ को हृदयकमल पर विराजमान करके आचार्य भगवन् पूज्यपाद स्वामी का भक्ति से स्मरण कर, पूज्य आचार्य गुरुदेव

विरागसागर जी का आशीष अनुभव कर अत्यन्त तन्मयता के साथ शांतिभक्ति का उच्चारण करने लगा। अपूर्व विशुद्धि अनुभव हो रही थी, रोम-रोम भक्ति रस में सराबोर था। तभी अचानक आँचल दीदी की आँखों में नेत्र ज्योति आ गई, कानों से स्पष्ट सुनाई देने लगा, मुख का टेढ़ापन दूर हो गया और निश्चल हाथ की अंगुलियाँ स्वयमेव खुल गईं, हाथ भी सहज चलने लगा। कमरे में जितने लोग थे, सभी जय-जयकार करने लगे। शांतिभक्ति का अतिशय देख सभी रोमांचित हो गये। आँचल दीदी बोलीं - गुरुदेव! मेरा चेहरा पहले जैसा हो गया है, मैं पहले की तरह ही बोल रही हूँ न, मुझे पहले की तरह ही दिखाई एवं सुनाई भी दे रहा है। मैंने कहा - बेटा! यह सब भगवान शांतिनाथ की कृपा है। आँचल दीदी बोलीं - गुरुदेव! अब तो मैं आहार का शोधन भी कर सकती हूँ और हाथों से आहार दे भी सकती हूँ, तभी उनका ध्यान अपने संवेदना शून्य पैर पर गया, बोलीं-गुरुदेव! यदि मेरा पैर भी ठीक हो जाता तो मैं आपको जल्दी आहार दे पाती। मैंने कहा - बेटा! भगवान शांतिनाथ की भक्ति से वह भी शीघ्र ठीक होगा। मैंने पुन: दीदी को शांतिभक्ति सुनाना शुरू किया, दीदी भी साथ पढ़ने लगीं। अहो! अद्भुत आनन्द



रस बहने लगा प्रभु की भक्ति करते। तभी दीदी के पैर की अंगुलियाँ चलने लगीं और दीदी अपने पैरों पर खड़ी हो गईं। व्हीलचेयर को पीछे धकेल दिया और कमरे में ही चलने लगीं। अभी शांतिभक्ति पूर्ण नहीं हुई थी, अत: मैंने कहा - बेटा! भक्ति कर लो। सभी ने भावपूर्वक शांतिभक्ति पूर्ण की। आँचल दीदी बोलीं - गुरुदेव! ऐसा लग रहा है मानो सोकर उठी हूँ, गुरुदेव! मैं तो बिल्कुल ठीक हो गई। मैंने कहा - बेटा! शांतिभक्ति के प्रसाद से तुम ठीक हुई हो। दीदी बोलीं - गुरुदेव सब आपकी ही कृपा है।

कमरे में दीदी के माता-पिता भी उपस्थित थे। यह भक्ति का चमत्कार देख उनकी आँखों से खुशी के आँसू ढुलक रहे थे। मैंने कहा - अब सभी लोग भगवान शांतिनाथ के पास चलेंगे। एक बार वहाँ भी शांतिभक्ति का पाठ करेंगे। दीदी ने कहा - अब मैं व्हीलचेयर से नहीं, पैदल ही चलूँगी। अहो! दीदी को पैदल चलते देख उपस्थित सैकड़ों भक्तजन आश्चर्य करने लगे। हमने शांति जिनालय में पुन: शांतिभक्ति का पाठ किया और भगवान शांतिनाथ के चरणों का भावपूर्वक स्पर्शकर आँचल दीदी को एवं संघस्थ सभी साधुओं को आशीर्वाद दिया। फिर हम सभी प.पू. सूरिगच्छाचार्य गुरुदेव

श्री विरागसागर जी के पास पहुँचे, वहाँ दीदी ने आचार्य वंदना की। पूज्य गुरुदेव ने मंगल आशीर्वाद दिया, और कहा – अहारजी में घटी यह अतिशयकारी घटना यहाँ चिरकाल तक गुंजायमान होती रहेगी।

सच, मैं बेहद रोमांचित और आनंदित हूँ। शांतिभक्ति का पाठ करते समय जो विशुद्धि और आनंद का अनुभव हुआ, वह शब्दों से व्यक्त नहीं किया जा सकता। भक्ति का यह अतिशय चमत्कार स्मृति पटल पर बार–बार आता ही रहता है। जिनेन्द्र भक्ति का माहात्म्य यही तो है–

**विघ्नौघा प्रलयं यान्ति, शाकिनी भूत पन्नगाः।**
**विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।**

अर्थात् जिनेश्वर की स्तुति करने पर विघ्नों का समूह तथा शाकिनी, भूत, सर्प आदि की बाधाएँ क्षण भर में क्षय को प्राप्त हो जाती हैं और विष भी निर्विषता को प्राप्त होता है।

**तेरह पंथ–बीस पंथ परपोषी हैं, अमरबेल की तरह हैं।**
**जो अनादि–अनिधन जिनागम पंथ रूपी वृक्ष**
**पर चढ़कर फल फूल रहे हैं।**
**–श्रमणाचार्य विमर्शसागर**



**यही वो महान् अतिशयकारी शान्ति भक्ति है जो सिद्धक्षेत्र अहारजी में परम पूज्य गुरुदेव को अपनी निर्मल–साधना से सहज सिद्ध हुई थी। पंचमकाल में दुर्लभतम इस महान सिद्धि से प्रेरित हो यक्षों द्वारा की गई थी महापूजा और नाम दिया गया था 'भावलिंगी संत' एवं 'अहार जी के छोटे बाबा'**

## श्री शान्ति भक्ति

(आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी कृत)

**न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्! पाददृयं ते प्रजाः, हेतु–स्तत्र विचित्र दुःख निचयः संसार घोरार्णवः। अत्यन्त स्फुर दुग्र रश्मि निकर व्याकीर्ण भूमण्डलो, ग्रैष्मः कारयतीन्दु पाद सलिल–च्छायानुरागं रविः।।1।।**

**(प्रणाम करने का ऐहिक फल)**

**क्रुद्धाशीर्विष दष्ट दुर्जय विष ज्वालावली विक्रमो, विद्या भेषज मन्त्र तोय हवनै–र्याति प्रशान्तिं यथा। तद् वत्ते चरणारुणाम्बुज युगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्, विघ्नाःकायविनायकाश्च सहसा शाम्यन्त्यहो विस्मयः।।2।।**

**(प्रणाम करने का फल)**

**सन्तप्तोत्तम कांचन क्षितिधर श्री स्पर्द्धि गौरद्युते, पुंसां त्वच्चरणप्रणाम करणात् पीडाः प्रयान्तिक्षयं।**

उद्यद्भास्कर विस्फुरत्कर शतव्याघात निष्कासिता,
नाना देहि विलोचन–द्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी।।3।।

(मुक्ति का कारण जिनस्तुति)

त्रैलोक्येश्वर भंग लब्ध विजयादत्यन्त रौद्रात्मकान्,
नाना जन्म शतान्तरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्र दावानलान्,
न स्याच्चेत्तव पाद–पद्म युगल स्तुत्यापगा वारणम्।।4।।

(स्तुति से असाध्य रोगों का नाश)

लोकालोक निरन्तर प्रवितत् ज्ञानैक मूर्त्ते विभो,
नाना रत्न पिनद्ध दण्ड रुचिर श्वेतातपत्रत्रय।
त्वत्पाद–द्वय पूत गीत रवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामया,
दर्पाध्मात–मृगेन्द्रभीम निनदाद् वन्या यथा कुञ्जराः।।5।।

(स्तुति से अनन्त सुख)

दिव्य स्त्री नयनाभिराम विपुल श्री मेरु चूडामणे,
भास्वद् बाल दिवाकर–द्युतिहर प्राणीष्ट भामण्डल।
अव्याबाध मचिन्त्यसार मतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम्,
सौख्यं त्वच्चरणारविन्द युगल स्तुत्यैव सम्प्राप्यते।।6।।



(भगवान् के चरण–कमल प्रसाद से पापों का नाश)

यावन्नोदयते प्रभा परिकरः श्रीभास्करो भासयंस्,
तावद् धारयतीह पंकज वनं निद्रातिभार श्रमम्।
यावत्त्वच्चरण द्वयस्य भगवन्! न स्यात् प्रसादोदयस्–
तावज्जीव निकाय एष वहति प्रायेण पापं महत्।।7।।

(स्तुति फल याचना)

शान्तिं शान्ति जिनेन्द्र शान्त मनसस् त्वत्पाद पद्माश्रयात्,
संप्राप्ताः पृथ्वी तलेषु बहवःशान्त्यर्थिनः प्राणिनः।
कारुण्यान् मम भाक्तिकस्य च विभो! दृष्टिं प्रसन्नां कुरु,
त्वत्पादद्वय दैवतस्य गदतः शान्त्यष्टकं भक्तितः।।8।।

शान्ति जिनं शशि निर्मल वक्त्रं,
शीलगुण व्रत संयम पात्रम्।
अष्टशतार्चित लक्षण गात्रं,
नौमि जिनोत्तम मम्बुज नेत्रम्।।9।।
पञ्चम मीप्सित – चक्रधराणां,
पूजित मिन्द्र – नरेन्द्र–गणैश्च।
शान्तिकरं गण–शान्ति–मभीप्सुः,
षोडश–तीर्थकरं – प्रणमामि।।10।।
दिव्यतरुः सुर – पुष्प–सुवृष्टि–
र्दुन्दुभिरासन – योजन घोषौ।

आतप – वारण – चामर – युग्मे,
यस्य विभाति च मण्डलतेजः।।11।।
तं जगदर्चित – शान्ति – जिनेन्द्रं
शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्व गणाय तु यच्छतु शान्तिं,
मह्यमरं पठते परमां च ।।12।।
येऽभ्यर्चिता मुकुट–कुण्डल–हार–रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत–पादपद्माः।
ते मे जिनाः प्रवर–वंश–जगत्प्रदीपाः,
तीर्थंकराः सतत शान्तिकरा भवन्तु।।13।।
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्र – सामान्य – तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शान्तिं भगवान्–जिनेन्द्रः।।14।।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः,
काले काले च सम्यग् वितरतु मघवा, व्याधयो यान्तु नाशम्।
दुर्भिक्षं चौरिमारिः क्षणमपि जगतां, मास्मभूज्जीव–लोके,
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्व–सौख्य–प्रदायि।।15।।



तद् द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः,
संतन्यतां प्रतपतां सततं सकालः।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण,
रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे।।16।।
प्रध्वस्त घाति कर्माणः, केवलज्ञान भास्कराः।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः।।17।।

(क्षेपक श्लोकानि)

शांति शिरोधृत जिनेश्वर शासनानां,
शान्तिः निरन्तर तपोभव भावितानां।
शान्तिः कषाय जय जृम्भित वैभवानां,
शान्तिः स्वभाव महिमानमुपागतानाम्।।1।।
जीवन्तु संयम सुधारस पान तृप्ता,
नंदंतु शुद्ध सहसोदय सुप्रसन्नाः।
सिद्धयंतु सिद्धि सुख संग कृताभियोगाः,
तीव्रं तपन्तु जगतां त्रितयेऽर्हदाज्ञा।।2।।

शान्तिः शं तनुतां समस्त जगतः संगच्छतां धार्मिकैः,
श्रेयः श्री परिवर्धतां नयधरा, धुर्यो धरित्री पतिः।
सद्विद्या–रसमुद्गिरन्तु कवयो, नामाप्य धस्यास्तु मां,
प्रार्थ्यं वा कियदेक एव, शिवकृद्धर्मो जयत्वर्हताम्।।3।।

इच्छामि भंते! संतिभत्ति-काउसग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पञ्च-महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय - विसेस संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेंद-मणिमय मउड मत्थय महियाणं बलदेव वासुदेव चक्कहर रिसि-मुणि-जदि-अणगारोव गूढाणं, थुइ सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ - वीर - पच्छिम - मंगलमहापुरिसाणं सया णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहि-मरणं जिण-गुण संपत्ति होउ मज्झं।

(इति श्री शांतिभक्ति)

जिनागम पंथ सूर्य की तरह है, जो लोक को
प्रकाशित करता है। तेरह-बीस पंथ राहु-केतु की तरह हैं,
जो जिनागम पंथ में कलंक पैदा करते हैं।
हम तेरह-बीस पंथ के राहु-केतु को हटाकर
जिनागम पंथ रूपी सूर्य को प्रकाशित करें।

– श्रमणाचार्य विमर्शसागर



## बहुचर्चित 'जीवन है पानी की बूँद' (महाकाव्य)

का उद्भव मूल रचयिता की कलम से...

बात 1997 भिण्ड चातुर्मास की है-

सूरज गुनगुनी धूप लेकर क्षितिज पर चमकने लगा। परम पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज अपने विशाल संघ के साथ प्रभातकालीन आवश्यक भक्ति क्रिया से निवृत्त हो चुके थे। प्रतिदिन की भाँति परम पूज्य गुरुदेव अपने विशाल संघ के साथ नित्य क्रिया हेतु नसियाँ जी की ओर बढ़ते जा रहे थे।

पूज्य गुरुदेव के साथ मैं भी यथाक्रम ईर्यासमिति से चल रहा था, और काव्य में रुचि होने के कारण चिंतन को आध्यात्मिक अनुभूतियों से स्नान करा रहा था। तभी अचानक चिंतन की गर्भस्थली में एक पंक्ति 'जीवन है पानी की बूँद, कब मिट जाये रे' का प्रसव हुआ, और मैं इस प्रसव की परमानंद अनुभूति का बारम्बार अनुभव करता हुआ स्मृति के दिव्य द्वार तक पहुँच गया। मैंने कभी 'होनी-अनहोनी' सीरियल देखा था, अतः होनी-अनहोनी शब्द को अपने काव्य में स्थान देने का विचार करता था, तभी अचानक नित्य क्रिया से लौटते समय चिंतन की गर्भस्थली से जुड़वाँ पंक्ति 'होनी-अनहोनी, हो-हो-2, कब क्या घट जाये रे'

का प्रसव हुआ। मैं दोनों जुड़वाँ पंक्तियों का अनुभव करता हुआ, अंतरंग में गुरु आशीष की श्रद्धा से भर गया। अतः इस आध्यात्मिक भजन को पूर्ण करने में उपयोग लगाया। भजन की पूर्णता होते ही मैं पूज्य गुरुदेव के श्री चरणों में पहुँचा, और विनयपूर्वक अपना चिंतन मधुर स्वर में गुरु चरणों में समर्पित किया। सच कहूँ, गुरुदेव ने अत्यंत आह्लाद से भरकर मुझे शुभाशीष दिया। गुरु का वह मंगल आशीष ही है कि इस आध्यात्मिक भजन ने सभी के कंठ को स्पर्शित किया, और इस समय का बहुचर्चित भजन कहलाया। जैन हों या अजैन सभी ने इसे समभाव से स्वीकारा, और मुझे अत्यंत श्रद्धा और प्यार से 'जीवन है पानी की बूँद' चिंतन के प्रणेता, इस नाम से पुकारने लगे।

यद्यपि इस भजन को जब अन्य साधु, विद्वान, गीतकार, गायक, अपनी प्रशंसा के लिए अपनी रचना कहकर बोलने लगे, तब पूज्य गुरुदेव को यह कहना पड़ा, कि 'जीवन है पानी की बूँद' भजन तो विमर्शसागर जी की मूल गाथाएँ हैं जिस पर अन्य साधु, विद्वान, गायक तो मात्र टीकायें लिख रहे हैं।

न तेरह पंथ की न बीस पंथ की,
घर-घर में हो चर्चा जिनागम पंथ की।



## जीवन है पानी की बूँद (महाकाव्य)

रचयिता-श्रमणाचार्य विमर्शसागर

जीवन है पानी की बूँद, कब मिट जाये रे-ऽऽ
होनी-अनहोनी, हो-हो-2, कब क्या घट जाये रे ऽऽ

साथ निभायेगा बेटा, सोच रहा लेटा-लेटा।
हाय बुढ़ापा आयेगा, पास न आयेगा बेटा।
ख्वाबों में तू क्यों, हो-हो-2 आनन्द मनाये रे ऽऽ

अर्द्धमृतक समवृद्धापन, झुकी कमर सिकुड़न-सिकुड़न।
गोदी में पोता-पोती, खोज रहा बचपन यौवन।
बीते जीवन के, हो-हो-2 तू गीत सुनाये रे ऽऽ

हाथों में लकड़ी थामी, चाल हो गई मस्तानी।
यम के घर खुद जाने की, जैसे मन में हो ठानी।
बेटा बहु सोचें, हो हो-2 डोकरो कब मर जाये रे ऽऽ

चारपाई पर लेटा है, पास न बेटी-बेटा है।
चिल्लाता है पानी दो, कोई न पानी देता है।
भूखा प्यासा ही, हो-हो-2 इक दिन मर जाये रे ऽऽ

जीवन बीता अरहट में, पुण्य–पाप की करवट में।
चढ़कर अर्थी पर जाये, अन्त समय भी मरघट में।
तेरा ही बेटा, हो–हो–2 तेरा कफन सजाये रे ऽऽ

सिर पर जिसे बिठाया है, गोदी में भी खिलाया है।
लाड़ प्यार से पाला है, सुख की नींद सुलाया है।
तेरा ही बेटा, हो–हो–2 तुझे आग लगाये रे ऽऽ

जिसके लिए कमाता है, जीवन साथी बताता है।
जिसकी चिन्ता कर करके, अपना चैन गँवाता है।
देहरी से बाहर, हो–हो–2 वो साथ न जाये रे ऽऽ

अगर भगवान मिल जायें और आनन्द न आये
तो आपको भगवान तो मिल गये, लेकिन
आप भगवान से नहीं मिल पाये।

–श्रमणाचार्य विमर्शसागर



## जानें, क्या है जिनागम पंथ?

• श्रमणाचार्य विमर्शसागर

'जिनागम पंथ' अनादि–अनिधन, विश्व मैत्री, प्रेम, एकता का परम पावन संदेश है, जो तीर्थंकर भगवंत,केवली अरिहन्त, गणधर संत, आचार्य–उपाध्याय–निर्ग्रंथ के मुख से अतीतकाल में कहा गया, वर्तमान में कहा जा रहा है और भविष्यकाल में कहा जायेगा।

अहो! तीर्थंकर जिन की वाणी यानि जिनवाणी, जिनश्रुत, जिनागम और इसमें वर्णित आत्महितकारी पंथ, मार्ग। यही है जिनागम पंथ।

अहो! जिनागम में कथित पंथ अर्थात् मार्ग, यही सच्चा था सच्चा है और सच्चा रहेगा। तीर्थंकर सर्वज्ञ जिन की वाणी ही जिनागम है। और जिनागम में कथित श्रमण–श्रावक धर्म यह पंथ अर्थात् मार्ग है। जो श्रमण–श्रावक धर्म के मार्ग पर चल रहा है वह जिनागम पंथ का पथिक 'जिनागम पंथी' है।

सचमुच जिनागम पंथ शाश्वत था, शाश्वत है, शाश्वत रहेगा। जो जिनागम पंथ का पथिक है वह सम्यग्दृष्टि, श्रावक अथवा श्रमण संज्ञा को प्राप्त जिनागम पंथी है। जो जिनागम पंथ की श्रद्धा से रहित है वह मिथ्यादृष्टि है।

अहो! विदेह क्षेत्र में विराजित विद्यमान बीस तीर्थंकरों के मुख से गणधरादि परमेष्ठी भगवंतों के द्वारा आज भी जिनवाणी, जिनश्रुत, जिनागम प्रगट हो रहा है।

धन्य हैं वे भव्य जीव जो जिनागम कथित समीचीन पंथ अर्थात् जिनागम पंथ को स्वीकार कर अनादि मोह, राग–द्वेष की परम्परा का विच्छेदन कर आत्मकल्याण कर रहे हैं। अहो! जिनागम पंथ के अलावा अन्य कोई कल्याण का मार्ग नहीं है। जिनागम पंथ के अलावा अन्य पंथ उन्मार्ग हैं, अकल्याणकारी हैं।

जयदु जिणागम पंथो, रागद्दोसप्प णासगो सेयो।
पंथो तेरह – बीसो, रागादि – वड्ढिओ असेयो।।

जो रागद्वेष का नाश करनेवाला है, कल्याणकारी है, ऐसा 'जिनागम पंथ जयवंत हो'। इसके अलावा तेरह पंथ, बीसपंथ आदि पंथ, रागद्वेष को बढ़ानेवाले हैं, अकल्याणकारी हैं।

अहो! कालदोष के कारण कतिपय विद्वानों ने तीर्थंकर जिनदेव के मुख से भाषित अर्थात् सर्वांग से खिरनेवाली दिव्यध्वनि में कथित जिनागम पंथ से बाह्य तेरहपंथ, बीसपंथ, शुद्ध तेरहपंथ आदि नाना पंथों की संज्ञाएँ रखकर परस्पर रागद्वेष को जन्म दिया है। कुछ विद्वान एवं श्रमण संज्ञा से भूषित जीवों ने भी ख्याति–पूजा–लाभ के लिए नये–नये पंथ गढ़कर भव्य जीवों का महान् अहित किया है।



अहो! अज्ञानता, आज ये जीव इन नाना संज्ञाओं से पंथों का पोषणकर जिनागम पंथ से दूर खड़े हो गये हैं। और कल्पित पंथों का पोषणकर अपना आत्म पतन ही कर रहे हैं। तेरह–बीस आदि संज्ञाएँ जिनेन्द्र देव की वाणी से बाह्य हैं। ये जिनागम पंथ से बाह्य पंथ ही वर्तमान में राग–द्वेष का कारण बने हुये हैं। चारों तरफ समाज में विघटन, मंदिरों में खींचतान, इन कल्पित तेरह–बीस आदि पंथों की ही देन है। जिनागम पंथ सभी को एक सूत्र में बाँधकर मैत्री–प्रेम–वात्सल्य का संदेश देता है।

अहो! आज भी यदि स्वकल्पित पंथों का दुराग्रह छोड़कर सब जीव जिनेन्द्र देव की वाणी यानि जिनवाणी, जिनागम में श्रद्धा रखें और जिनागम वर्णित पंथ यानि 'जिनागम पंथ' को सच्ची श्रद्धा से स्वीकारें, तो सर्व समाज में आज भी एकता का सूत्रपात हो सकता है। आपस के रागद्वेष मिट सकते हैं और जिनशासन गौरवान्वित हो सकता है।

'जयदु जिणागम पंथो।'
'जिनागम पंथ जयवंत हो।'

हर जैनी का एक ही नारा–एक जिनागम पंथ हमारा

राग–द्वेष हटाने वाला–एक जिनागम पंथ है
मैत्री भाव जगाने वाला–एक जिनागम पंथ है

## जागो जागो जैनियो

रचयिता – मुनि विचिन्त्यसागर (संघस्थ)

हर इक जुबाँ पे अब जिनागम पंथ हो सदा
जयवंत हो जयवंत हो जयवंत हो सदा
जागो जागो जैनियो–2

अरिहंत ने बस एक मोक्ष मार्ग कहा था
हर काल में अनादि से जीवंत रहा था
अरिहंत के उस पंथ पे अब आँच आई है
अब जैन एकता भी जिससे लड़खड़ाई है
अब हम सभी का एकमात्र मंत्र हो सदा
जयवंत हो...

अज्ञानियों के बुद्धिजाल की विचित्रता
पंथों में बाँट दी समाज की पवित्रता
जिस थाल में खाया उसी में छेद किया है
जिनवाणी को पढ़ पढ़ के उसमें भेद किया है
इन सब कुरीतियों का शीघ्र अंत हो सदा
जयवंत हो...



कुछ जातियों में बँट गये कुछ पंथों में बँटे
कतिपय जो शेष थे वो आज संतों में बँटे
अब छोड़ दो अपनों के लिये विष परोसना
इक दूसरे की पूजा पद्धति को कोसना
अब प्रेम का वात्सल्य का बसंत हो सदा
जयवंत हो...

आचार्यों ने जिस पंथ की महिमा बताई है
उपकृत हुये देवों ने जिसकी दी दुहाई है
जिनवाणी माँ की पीड़ा हृदय में समाई है
अब भावलिंगी संत ने अलख जगाई है
आराध्य सबके ऐसे ही निर्ग्रंथ हों सदा
जयवंत हो...

## पिच्छिका के गुण

रयसेयाणमगहणं मद्दव सुकुमालदा लघुत्तं च।
जत्थेदे पंच गुणा तं पडिलिहणं पसंसंति।।

जिसमें ये पाँच गुण हैं उस शोधनोपकरण पिच्छिका की साधुजन प्रशंसा करते हैं– धूलि और पसीने को न पकड़ती हो, कोमल स्पर्शवाली हो, सुकुमार अर्थात् नमनशील हो और हल्की हो।

(भ.आ./97)

## कर तू प्रभु का ध्यान

रचयिता – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

कर तू प्रभु का ध्यान–बाबा, कर तू प्रभु का ध्यान।
निज घट में भगवान–बाबा, निज घट में भगवान।।

काँटों में भी जीवन तेरा, फूलों सा खिल जायेगा।
खोज रहा है जिसको तू वह, पलभर में मिल जायेगा।
खुद को तू पहिचान–बाबा, खुद को तू पहिचान।1।।

धन–वैभव यह महल–खजाना, कुछ भी साथ न जायेगा।
सुबह खिला जो फूल बाग में, साँझ समय मुरझायेगा।
कर ले धर्मध्यान–बाबा, कर ले धर्मध्यान।।2।।

कभी किसी का दिल दु:ख जाये, ऐसे बोल कभी मत बोल।
घावों पर मल्हम बन जायें, ऐसे बोल बड़े अनमोल।
कहलाता यह ज्ञान–बाबा, कहलाता यह ज्ञान।।3।।

माता–पिता, बड़ों का आदर, धर्ममार्ग पर चलो सदा।
गुरुजन की नित सेवा करना, श्रावक का कर्तव्य कहा।
पाओगे सम्मान–बाबा, पाओगे सम्मान।।4।।



हिंसा, झूठ, कुशील, परिग्रह, चोरी यह मत पाप करो।
पाप विनाशक, धर्म प्रकाशक, णमोकार का जाप करो।
हो सम्यक् श्रद्धान–बाबा, हो सम्यक् श्रद्धान।।5।।

राग–द्वेष भावों के कारण, भवसागर में डूब रहा।
गँवा रहा भोगों में जीवन, मन फिर भी न ऊब रहा।
क्यों बनता नादान–बाबा, क्यों बनता नादान।।6।।

जिसको अपना कहा आज तक, हुआ कभी ना वह अपना।
जिसकी खातिर जिया आज तक, निकला वह सुंदर सपना।।
क्यों तू करे गुमान–बाबा, क्यों तू करे गुमान।।7।।

मेंढक ने प्रभु ध्यान किया जब, मरकर देव हुआ तत्काल।
समवसरण में प्रभु को ध्याया, जीवन उसका हुआ निहाल।
मिट जाये अज्ञान–बाबा, मिट जाये अज्ञान।।8।।

### भूल

भूल होना बहुत बड़ी बात नहीं है, भूल को भूल ही न माना जाए तो बहुत बड़ी बात है। भूल को भूल मानकर उसे सुधारना ही विवेक है।

– श्रमणाचार्य विमर्शसागर

## शान्तिनाथ कीर्तन

रचयिता – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

जय हो, जय हो, जय हो, जय हो, जय हो, भगवन्–2
जय हो, जय हो, जय हो, जय हो, शान्ति भगवन्।

हम आये हैं – द्वार तुम्हारे–2
दे दो प्रभु जी – हमको सहारे–2
शान्तिनाथ भगवन्–भगवन्–भगवन्ऽऽ
जय हो.....

छवि वीतरागी–प्यारी प्यारी लागे–2
दरश जो पाया–धन्य भाग जागे–2
चरणों करुँ नमन–नमन–नमनऽऽ
जय हो.....

सर्वज्ञ स्वामी–शरण में आया–2,
कहीं न मिला जो–वह सुख पाया
हर्षित हुए नयन–नयन–नयनऽऽ
जय हो.....



हित उपदेशी–आप कहाते–2
हम गुण गाने–भक्त बन जाते–2
छोड़ूँ न अब चरण–चरण–चरणऽऽ
जय हो.....

अहार जी के – बाबा कहाते–2
यक्ष यक्षिणी भी–सिर को नवाते–2
झुकते हैं मुनिगण–मुनिगण–मुनिगणऽऽ
जय हो.....

दुखिया हो कोई–द्वार पे आये–2
हँसता हुआ ही–द्वार से जाये–2
श्रद्धा हो पावन–पावन–पावनऽऽ
जय हो.....

दूसरों के अनुभवों से लाभ उठाने वाला
बुद्धिमान होता है।

## ऋण मुक्ति का वर दीजिये

रचयिता – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

गुरुदेव मेरे आप बस, इतनी कृपा कर दीजिए।
कल्याण अपना कर सकूँ, वरदान इतना दीजिए।।

सोचूँ सदा अपना सुहित, नहिं काम क्रोध विकार हो।
हे नाथ ! गुरु आदेश का, पालन सदा स्वीकार हो।
सिर पर मेरे आशीष का, शुभ हाथ प्रभु धर दीजिए। गुरुदेव...

दृढ़ शील संयम व्रत धरूँ, नित ब्रह्मचर्य लखूँ सदा।
सीता सुदर्शन सम बनूँ, निज आत्मसौख्य चखूँ सदा।
माता सुता बहिना पिता, दृष्टि विमल कर दीजिए। गुरुदेव...

सच्चा समर्पण भाव हो, नहिं स्वार्थ की दुर्गन्ध हो।
विश्वासघात ना हम करें, हर श्वाँस में सौगंध हो।
हे नाथ! गुरु विश्वास की, डोरी अमर कर दीजिए। गुरुदेव...

जागे न मन में वासना, मन में कषायें न जगें।
हो वात्सल्य हृदय सदा, कर्त्तव्य से न कभी डिगें।
गुरुभक्ति की सरिता बहे, निर्मल हृदय कर दीजिए। गुरुदेव...



भावों में निश्छलता रहे, छल की रहे न भावना।
गुरु पादमूल शरण मिले, करते हैं हम नित कामना।
जिनधर्म जिनआज्ञा सुगुरु, सेवा का अवसर दीजिए। गुरुदेव...

उपकार जो मुझ पर किये, गुरुवर भुला न पायेंगे।
जब तक है तन में श्वाँस हम, उपकार गुरु के गायेंगे।
हम शिष्य हैं गुरु के ऋणी, ऋणमुक्ति का वर दीजिए। गुरुदेव...

सम्यक्त्व ज्ञान चरित्र से, सुरभित रहे मम साधना।
आचार की मर्यादा ही, हे नाथ ! हो आराधना।
स्वर-स्वर समाधिभाव का, चिंतन मुखर कर दीजिए। गुरुदेव...

### मिथ्यादृष्टि कौन?

**मदिसुदणाण-बलेण दु, सच्छंदं बोल्लेदे जिणुद्दिट्ठं।**
**जो सो होदि कुदिट्ठी, ण होदि जिणमग्गलग्गरवो।।3।।**

**-रयणसार**

**अर्थ-** जो जीव जिनेन्द्रदेव कथित वस्तुतत्त्व को मति-श्रुतज्ञान के बल से स्वेच्छानुसार-स्वच्छन्द रूप से बोलता है, वह मिथ्यादृष्टि है। उसका वचन जिनमार्ग में अनुरक्त व्यक्ति का वचन नहीं है। ऐसा जिनेन्द्रदेव ने कहा है।

## आचार्य वन्दना

अथ आपराह्णिक (पौर्वाह्णिक) आचार्य वन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(कायोत्सर्ग करें)

## श्री सिद्ध भक्ति

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं।।1।।
तवसिद्धे णयसिद्धे, संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि।।2।।

इच्छामि भंते! सिद्धभक्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविहकम्म - विप्प मुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोए - मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं,



अतीताणागद - वट्टमाण - कालत्तय सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

अथ आपराह्णिक (पौर्वाह्णिक) आचार्य वन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री श्रुत भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(कायोत्सर्ग करें)

## श्री श्रुत भक्ति

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस्-त्र्यधिकानि चैव।
पंचाश-दष्टौ च सहस्र-संख्या-मेतच्छ्रुतं पंचपदं नमामि।।1।।

अरहंत – भासियत्थं गणहर – देवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुद–णाण–महोवहिं सिरसा।।2।।

इच्छामि भंते! सुदभत्ति काउस्सग्गो-कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग-पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

अथ आपराह्निक पौर्वाह्निक आचार्य वन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

## श्री आचार्य भक्ति

श्रुत-जलधिपारगेभ्यः, स्व-परमतविभावना पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः।।1।।
छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण-संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिए सदा वंदे।।2।।



गुरु-भत्ति संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंतिं अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति।।3।।

ये नित्यं व्रत-मंत्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः।
षट्-कर्माभि-रतास्तपो-धन-धनाः साधुक्रियाः साधवः।।
शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणाश्-चंद्रार्क तेजोऽधिका।
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः।।4।।

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णव- गंभीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः।।5।।

इच्छामि भंते! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो-कओ, तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्त-जुत्ताणं, पंच विहाचाराणं आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

## आचार्य परम्परा के छंद

श्री 'आदिसागर–आचार्यः' गुरुं चारित्र विभूषितं।
भिषजं मांत्रिकं ज्योति–र्विदं नैयायिकं मतं।
निमित्तज्ञं बुधैः पूज्यं, सर्व संग विदूरितं।
प्रभाव शालिनं धीरं, वंदे त्रैविध भक्तितः।।1।।

वंदे श्री 'महावीर कीर्ति' सुगुरुं, विद्याब्धि पार प्रदं।
कालेद्यापि तपोनिधिं गुण गणैः, पूर्णम् पवित्रं स्वयं।
नग्नत्वा द्वाविंशति परिषहै, र्भग्नोन यो योगिराट्।
पायान्मां कुबुद्धि कुष्ट कुहरात, संसार पाथोनिधे।।2।।

कल्पांत काल वचना विषया गुरुणां।
लोकोत्तराऽखिल गुण स्तवनं प्रशंसा।
स्वामिन् नमोस्तु सिरसा मनसा वचोभिः।
दद्यात् शिवं 'विमलसागर' सूरिवर्यः।।3।।

स्वाध्याय ध्यान तप त्याग महान मूर्तिः।
सिद्धान्त सार कुशलो जिनदेव भक्त्या।
महावीरकीर्ति गुरुवर्य सुपट्ट शिष्य।
नित्य नमामि सूरि 'सन्मतिसागराय'।।4।।



तुभ्यं नमो रवि समः तव तेजकाय।
तुभ्यं नमः शशि समुज्ज्वल वैभवाय।
तुभ्यं नमो दुरित जाल विनाशनाय।
तुभ्यं नमो गुरु 'विराग' शिव प्रदाय।।5।।

तुभ्यं नमः परम रूप दिगम्बराय।
तुभ्यं नमः सु जिनशासन वर्धनाय।
तुभ्यं नमो गुरु विराग सु नंदनाय।
तुभ्यं नमो गुरु 'विमर्श' यतीश्वराय।।6।।

## प्रायश्चित याचना विधि

हे स्वामिन्! (पक्षे) (चातुर्मासे) (संवत्सरे) (देवसिय) (राइय) अष्टविंशति मूलगुणेषु (मुनिव्रत, आर्यिकाव्रत क्रियायां) मनसा वचसा कर्मणा कृत–कारित–अनुमोदनैः आहारे विहारे निहारे च रागेण द्वेषेण मोहेन भयेन लज्जया प्रमादेन वा जागरणे स्वप्ने च ज्ञाताज्ञात भावेन अतिक्रम–व्यतिक्रम–अतिचार–अनाचार इत्यादयो दोषा लग्नाः तान् क्षमित्वा प्रायश्चित्त–दानेन शुद्धं कुर्यात् माम्।

## सुप्रभातम्

रचयिता – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

(तर्ज–दिल के अरमाँ...)

सुप्रभातं, सुप्रभातं हो मेरा–2
प्रभु दरश से सुप्रभातं हो मेरा।
गुरु दरश से सुप्रभातं हो मेरा। सुप्रभातं...

मैं भटकता ही रहा दर–दर प्रभो।
याद न आई तेरी क्षण भर प्रभो।।
तू मेरी मंजिल तू ही साथी मेरा–2। प्रभु दरश से...

वीतरागी आप हो सर्वज्ञ हो।
हैं प्रफुल्लित देखकर नैना अहो।।
हे हितुपदेशी तू ही भगवन् मेरा–2। प्रभु दरश से...

क्या करूँ अर्पण चरण में भाव से।
लाया भक्ति पुष्प दिल से चाव से।।
हर जनम चरणों में है अर्पित मेरा–2। प्रभु दरश से...



झूठ परनिंदा न हो मुख से कभी।
हो सदा गुणगान गुणिजन का सभी।।
प्रेम का व्यवहार हो सबसे मेरा–2। प्रभु दरश से...

त्याग दूँ दुर्भावना अभिमान की।
गुरु जिनागम पंथ की करूँ आरती।।
हो सदा भक्ति से मन निर्मल मेरा–2। प्रभु दरश से...

### जीवनोपयोगी विमर्शांश

* गुरु उस मोमबत्ती की तरह हैं जो स्वयं जलकर दूसरों के जीवन को उजाले से भर देते हैं।
* जिसके जीवन में धर्म होता है उसके जीवन में हमेशा शांति होती है।
* संसार के सुखों का कारण भी धर्म है।
* इष्ट वस्तु को कभी सामान्य पुरुषों के हाथ में नहीं सौंपना चाहिए।
* संकल्प जागृत होते ही हमारा आचरण स्वयं सुधरने लगता है।
* यदि आप अपने चारित्र का ध्यान रखेंगे तो आपकी प्रतिष्ठा अपना ध्यान खुद रख लेगी।

# सुप्रभात स्तोत्रम्

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

हे जिनेन्द्र! स्वर्गावतरण-तव, हुआ जन्म अभिषेकोत्सव।
दीक्षा ग्रहण समय उत्सव जो, केवलज्ञान-प्रभा उत्सव।।
गायन संग हुई जो पूजा, संस्तुतियाँ निर्वाणोत्सव।
उसी तरह हो मंगलकारी, मेरा सुप्रभात उत्सव।।1।।

देवगणों के मुकुट जहाँ पर, नत होते हों आनंदित।।
खचित महामणि आभाओं से, चरण-युगल हैं स्पर्शित।।
कर्म विजेता हे नाभि सुत! अजितनाथ! सम्भव भगवान्।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।2।।

तीन छत्र मस्तक पर शोभित, ढुरते हुये चँवर गतिमान।
हे देवाधिदेव अभिनन्दन-मुनि! हे सुमतिनाथ भगवान्।।
हे पद्मप्रभ जिन! तव तन द्युति, पद्मराग मणिप्रभा समान।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।3।।

कदली दल सम देहवर्ण शुभ, हे सुपार्श्व! अर्हन् भगवान्।।
रजतगिरि हिमगिरि सित मुक्ता-सम हे चन्द्रप्रभ भगवान्।।



पुष्पदन्त जिन! धवल विमल शुचि, शुद्ध स्फटिक मणि समान।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।4।।

हे शीतल जिन! शोभित तव तन, तपे स्वर्ण की कान्ति समान।
पापरूप वसुकर्म पंकमल, नाशे हे श्रेयांस भगवान्।।
लाल-लाल बन्धूक पुष्प सम, तव तन वासुपूज्य भगवान्।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।5।।

उद्धत कामबली जेता हे विमल! अमलतनधारी आप।
हे अनन्त जिन! नंत सुखार्णव, महाधैर्य का प्रखर प्रताप।।
दुर्धर कर्म कलुष से विरहित, धर्मनाथ जिनवर भगवान्।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।6।।

शान्तिनाथ हे शान्ति प्रदाता, शोभित अमरीपुष्प समान।
कुन्थुनाथ जिन! अहा विभूषित, दयारूप निजगुण सुखखान।।
तीर्थनाथ देवाधिदेव तारो, हे अरहनाथ भगवान्!।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।7।।

मोहमल्ल के मदभंजक हे मदन विजेता मल्लिनाथ।
शिवकारी सत्शासनधारी ऐसे हे मुनिसुव्रतनाथ।।

परमशान्तमय सत्य संपदा धारक नमिनाथ भगवान्।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।8।।

उज्ज्वल कान्ति तमाल वृक्ष सम, शोभित नेमिनाथ भगवान्।।
जीत लिये उपसर्ग भयंकर क्षमामूर्ति हे पार्श्व महान्।।
स्याद्वाद सिद्धान्तमणी को वर्द्धमान आदर्श समान।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।9।।

श्वेत, नील अरु हरित, लाल वा, पीतवर्ण से शोभित तन।
जो अविनाशी शिवसुखवासी, जिनका ध्यान करें मुनिजन।।
ढाई द्वीप के तीर्थ प्रवर्तक, सत्तर एक शतक भगवान्।
सुप्रभात हो मेरा हे जिन! करते सतत् आपका ध्यान।।10।।

तीर्थंकर चौबीस का, प्रतिदिन प्रातः ध्यान।
सुप्रभात नक्षत्र शुभ, मंगल कहा महान्।।11।।

देव सिद्ध मुनिसंघ का, प्रतिदिन प्रातः ध्यान।
सुप्रभात नक्षत्र शुभ, श्रेय रूप सुखखान।।12।।

किया प्रवर्तन तीर्थ का, भविजन को सुखथान।
उन महान वृषभेश का, प्रातः उत्तम ध्यान।।13।।



नित्योदित रविज्ञान से, मिटा तिमिर अज्ञान।
अहा! खुले नयनांध कर, सुप्रभात जिन ध्यान।।14।।

किया कर्मवन दग्ध पा, तैजस शुक्लध्यान।
कमल नयन जिन वीर का, सुप्रभात शुभध्यान।।15।।

है जिनेन्द्र शासन अहा! तीन लोक हितभूप।
सुप्रभात नक्षत्र शुभ, शिवं सुमंगल रूप।।16।।

( इति श्री सुप्रभात स्तोत्र )

## भावलिंगी संत का स्वरूप

देहादि संग रहिओ, माणकसाएहिं सयल परिचत्तो।
अप्पा अप्पम्मि रओ, स भावलिंगी हवे साहू।।56।।

–अष्टपाहुड

देहादि संग (परिग्रह) से रहित और मान कषाय के साथ सकल कषाय से रहित हो आत्मा अपनी आत्मा में लीन होता है वही भावलिंगी साधु होता है।

# श्री महावीराष्टक स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

व्यय-उत्पाद-ध्रौव्यमय सब ही भाव चराचर अन्तरहित।
दर्पण सम चैतन्यज्ञान में होते युगपत् प्रतिबिम्बित।।
जगप्रत्यक्षी मोक्षमार्ग को प्रकट कर रहे सूर्य समान।
मेरे लिये नयनपथगामी होवें महावीर भगवान्।।1।।

दोनों नयनकमल जिनके निस्पंद लालिमाहीन अहा!
अन्तर-बाहर क्रोध न कणभर, जन-जन को यह प्रकट किया।।
परमशान्तिमय मूरत जिनकी है अति-निर्मल आभावान।
मेरे लिये नयनपथगामी होवें महावीर भगवान्।।2।।

वन्दन करते देवगणों के मुकुटमणि झिलमिल-झिलमिल।
आभा से हो उठे सुशोभित, कांतिमान तव चरण-कमल।।
भव ज्वाला के शमन हेतु जग जन को जल सम जिनका ध्यान।
मेरे लिये नयनपथगामी होवें महावीर भगवान्।।3।।



जब अर्चा के भाव सँजो शुभ प्रमुदितमन मेंढक इह-लोक।
अणिमा-महिमा गुणयुत सुखनिधि, पा सकता क्षण में दिवि लोक।।
तब सद्भक्त मोक्ष सुख पावें इसमें क्या आश्चर्य महान ?
मेरे लिये नयनपथगामी होवें महावीर भगवान्।।4।।

स्वर्णाभा सी दीप्ति देह फिर भी विदेह हे ज्ञान निकर!
आत्मनैक पर एक जन्मगत हो सुत सिद्धारथ नृपवर।।
कहलाते भव-राग-विगत प्रभु हो बहिरंग लक्ष्मीवान्।
मेरे लिये नयनपथगामी होवें महावीर भगवान्।।5।।

जिनके शुभ वचनों की गंगा नाना नय कल्लोल विमल।
विपुल ज्ञान जल से जगजन का जो करती अभिषेक अमल।।
परिचित है बुधजन हंसों से संप्रति में यह गंग महान।
मेरे लिये नयनपथगामी होवें महावीर भगवान्।।6।।

मदन महाभट चंडवेग युत् दुर्निवार त्रयलोकजयी।
निजबल से कौमार दशा में जीता हुये काम विजयी।।
नित्यानन्द स्वभावी शिवपद राज प्राप्ति का ध्येय महान।
मेरे लिये नयनपथगामी होवें महावीर भगवान्।।7।।

मोह रोग प्रशमन करने हो वैद्य अकारण नित तत्पर।
हे निरपेक्ष! परम बन्धु! हे विदित महिम! हे मंगलकर।।
भवभीरू साधकजन को शुभ शरण आप उत्तम गुणवान्।
मेरे लिये नयनपथगामी होवें महावीर भगवान्।।8।।

महावीर भगवान का आठ पद्य गुणगान।
पढ़े-सुने जो भाव से वह पाता शिवथान।।
'भागचन्द्र' द्वारा रचित भक्ति भाव प्रधान।
है 'विमर्श' अंतिम यही मिट जाये अज्ञान।।9।।

( इति श्री महावीराष्टक स्तोत्र )

### शास्त्र विक्रय जिन-आज्ञा की अवमानना

अनादरार्थश्रवणमालस्यं शास्त्रविक्रयः।
बहुश्रुताभिमानेन तथा मिथ्योपदेशनम्।।

-तत्त्वार्थसार 4-14

अर्थात् अनादरपूर्वक अर्थ का सुनना, आलस्य, 'शास्त्र बेचना' अपने को बहुज्ञानी मानकर मिथ्या उपदेश देना आदि ज्ञानावरण कर्म के आस्रव के कारण हैं।



## चौबीस तीर्थंकर स्तुति

रचयिता - श्रमणाचार्य विमर्शसागर

किया कर्मयुग आदि में, धर्मतीर्थ अवतार।
आदिब्रह्म आदीश को, प्रणमूँ बारम्बार।।1।।

जीत लिया निज मन अहा!, अमित ज्ञान से आप।
अजितनाथ! को नित नमूँ, मिटे सकल संताप।।2।।

'शं' पाना सबकी नियति, है यह आतमज्ञान।
आत्मज्ञान का दान दो, हे शम्भव! भगवान्।।3।।

अभिनन्दन निजभाव का, करना नित्य विचार।
अभिनन्दन! वन्दन मेरा, कर लो अब स्वीकार।।4।।

जहाँ सुमति वहँ धर्म है, जहाँ कुमति वहँ पाप।
सुमतिनाथ! वन्दन करुँ, मिटे कुमति भव ताप।।5।।

छद्मज्ञान दुःखकार है, पूर्णज्ञान सुखकार।
पद्मप्रभ! चरणों नमन, मिले मुक्ति का द्वार।।6।।

अनेकान्त श्रद्धान ही, आत्मज्ञान का मूल।
वन्दन प्रभु सुपार्श्व को, दिखलाई जिन भूल।।7।।

चन्द्रकांति जैसा धवल, यथाख्यात चारित्र।
हे चन्द्रप्रभ! दो हमें, रहूँ नहीं अपवित्र।।8।।

कामादिक को नाशकर, हुये आप निष्काम।
पुष्पदन्त चरणों अहा! , करता पुष्प प्रणाम।।9।।

प्रभु! निश्चय-व्यवहार से, बतलाया शिवपंथ।
चरणों शीतलनाथ के, झुकते गणधर संत।।10।।

रत्नत्रय ही श्रेय है, दिया धर्म उपदेश।
प्रभु श्रेयांस की भक्ति से, मिट जाये भव क्लेश।।11।।

पाँच महाव्रत गुप्तित्रय, पाँच समितियाँ पाल।
तीन लोक से पूज्य प्रभु, वासुपूज्य! पद भाल।।12।।

अमलस्वभावी आत्मा, प्रगट विमल पर्याय।
विमलनाथ! वर दो हमें, मम चेतन धुल जाए।।13।।

द्रव्य-भाव-नोकर्म का, किया आपने अन्त।
हे अनन्तप्रभु! आप सम, पौरुष पाउँ अनन्त।।14।।

धर्ममार्ग निज में नियत, कहता आतमधर्म।
धर्मनाथ की वन्दना, करो मिटे सब भर्म।।15।।

आत्मशांति जब तक नहीं, तब तक सदा अशांति।
शान्ति प्रभु सम शान्ति हो, करो जगत से क्रान्ति।।16।।



कुन्थु आदिक् जीव पर, धरो दया का भाव।
कुन्थुनाथ पद पूजकर, भव का करो अभाव।।17।।

इन्द्रिय सुख के दास हो, किया चतुर्गति वास।
बनो दास अरनाथ के, मिले मोक्ष निज पास।।18।।

मोह मल्ल को जीतकर, आप हुए निर्मोह।
मल्लिनाथ पद रज नमूँ, करने मोह बिछोह।।19।।

बिन व्रत संयम नियम के, निश्चय व्रत नहिं जान।
दिव्यध्वनि में यह कहा, मुनिसुव्रत भगवान।।20।।

नय प्रमाण निक्षेप से, कहा तत्त्व का सार।
नमिनाथ द्वय पद नमूँ, पाने पद अविकार।।21।।

पुण्य-पाप दोनों कहे, स्वर्ण लोह जंजीर।
नेमिनाथ प्रभु! मेंट दो, मम भव-भव की पीर।।22।।

अशुभ छोड़ शुभ पा लिया, शुभ तज शुद्ध स्वभाव।
पार्श्वनाथ प्रभु दीजिये, आत्मधर्म की छाँव।।23।।

स्याद्वाद असि धार से, जीते कुमत अधीर।
सर्वश्रेष्ठ जिनधर्म है, कहा नमूँ महावीर।।24।।

तीर्थंकर चौबीस का, हो ''विमर्श'' नित ध्यान।
ध्यान-ध्येय-ध्याता मिटे, मिले सहज भगवान।।

# श्री लघु स्वयंभू स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

स्वयंबुद्ध जो स्वयंबोध से मार्ग बताया जीवन का।
हर्षित हुये सभी जन-मन जो मिला ज्ञान धन-अर्जन का।।
दिया भविकजन को शिवकारी मोक्षमार्ग का संबोधन।
आदि विधाता! आदिनाथ के चरण युगल में नित्य नमन।।1।।

हर्षित इन्द्र क्षीरसागर से प्रासुक सुरभित जल लाया।
मेरूगिरि पर हे जिनेन्द्र! अभिषेक किया अति हर्षाया।।
मोहजयी! हे मदनजयी! जग जन को सुखकारी तव नाम।
अजितनाथ! अर्जित अघनाशन शुद्धभाव से करूँ प्रणाम।।2।।

शुक्लध्यान में लीन हुये प्रभु उपजा महा अचिन्त्य प्रभाव।
बँधे हुये सब घाति-अघाति-कर्मद्रव्य का हुआ अभाव।।
महा मोक्षपद पाने वाले हरो विपद मम संभवनाथ।
तव पद-पंकज का अनुरागी सदा झुकाऊँ अपना माथ।।3।।

भूमण्डल पर उस रजनी का पिछला पहर महान हुआ।
माता को जब शुभ-शुभ सोलह स्वप्नों का आह्वान हुआ।।



पितु ने परमगुरु होगा यह शुभफल-स्वप्न महान् कहा।
अभिनन्दन जिन! का अभिवन्दन हर्षभाव से करूँ सदा।।4।।

जीत लिये सब महाधुरन्धर कुमतवादियों के कुविवाद।
नय-प्रमाण वचनों के द्वारा स्याद्वाद का गूँजा नाद।।
बतलाया माहात्म्य विश्व को जैनधर्म का दे उपहार।
सुमतिनाथ जिन! हमें सुमति दो करता नित नत हो नवकार।।5।।

जब सौधर्म इन्द्र ने जाना अवधिज्ञान से प्रभु अवतार।
धनपति को आदेश दिया बढ़ सात कदम कीना स्वीकार।।
पन्द्रह मास रतन की वर्षा पितु के अँगना हुई अपार।
पद्मप्रभ! तव पाद पद्म का भ्रमर बना करता नवकार।।6।।

जिनकी हितकर दिव्यध्वनि सुन अहो! इन्द्र, धरणेन्द्र, नरेन्द्र।
अपने हृदय करें नित धारण प्रभु सम हम भी बनें जितेन्द्र।।
द्वादशसभा मध्य में जिनका हुआ प्रकाशित आतमज्ञान।
नाच रहा मन मोर चरण में वंदन हे सुपार्श्व भगवान्।।7।।

सुन्दर-सुन्दर प्रातिहार्य वसु जो अतिशय को प्राप्त अहा।
अठदस दोष कोष नश प्रभु जी सुगुण छियालीस प्राप्त महा।।
सदा प्रकाशित ज्ञानदीप से मोह-महातम किया विनाश।
चाहूँ चारु चरण चन्दप्रभ! शुचि भावों से प्रणत सुदास।।8।।

पाँच-महाव्रत-समिति गुप्तित्रय दिया सभा में प्रभु उपदेश।
भवसागर में भ्रमने वाले भविजन का मिट गया क्लेश।।
संवर सहित निर्जरा मंगल द्वादश विध तप किया प्रकाश।
पुष्पदन्त पद पुष्प अर्चता पाने निज चैतन्य विलास।।9।।

उत्तम-क्षमा-मार्दव-आर्जव-शौच-सत्य-संयम-तपधर्म।
त्याग-अकिंचन-ब्रह्मचर्य दस-विध धर्मों का जाना मर्म।।
व्रत बंधन स्वीकार बुद्धि से मोक्षमार्ग के नायक आप।
खुली स्वर्णबेड़ी शीतलजिन! चरण नमूँ मेटूँ भवताप।।10।।

मंगलकारी चार-संघ वा जग जन को इस वसुधा पर।
नाश दिया है क्रोध सदा ही शान्तचित्त हो हे प्रभुवर।।
दिव्यदेशना के विधान से द्वादशांग-श्रुत का उपदेश।
चरण नमूँ निश्रेयस् पाने हे श्रेयान्स जिन! हे अखिलेश।।11।।

मुक्ति अंगना वरण हेतु जो रचा प्रभु ने बड़ा विशाल।
रत्नत्रय का मुकुट मनोहर सदा सुशोभित गुण मणिमाल।।
कण्ठालिंगन पाया जिसने धन्य-धन्य वह मुक्ति-रमा।
वासुपूज्य जिन! चरण पूजता वंदन सिर को नमा-नमा।।12।।

परमध्यान-व्रतधारी होकर भवि को हित उपदेश दिया।
हे ज्ञानी! परमात्म-स्वरूपी मिथ्यातम उच्छेद किया।।



इन्द्रियसुख है सुखाभास यह जाना शिवसुख पाया आप।
विमलनाथ! तव चरण नमूँ नित मिट जाये मम भवसंताप।।13।।

दूर किया है सर्व परिग्रह बाह्याभ्यन्तर विविध प्रकार।।
मूर्च्छाभाव तिरोहित करके हे प्रभु! आप हुए अविकार।।
भविजन को हित-मार्ग दिखाया पाया मुक्ति-महल महान।
हे अनंत जिन! चरण नमूँ नित पाऊँ सदानन्द-सुखज्ञान।।14।।

सात-तत्त्व छह-द्रव्य प्रकाशे नवपदार्थ पन-अस्तिकाय।
युक्ति से निर्णीत किये हैं कालद्रव्य को कहा अकाय।।
स्वयंबोध से किया प्रकाशित लोकाकाश अलोकाकाश।
धर्मनाथ! नित चरण नमूँ तव पाने धर्म-सुरभि अविनाश।।15।।

जीत लिया षट्खण्ड हुआ तब पंचम-चक्रवर्ति उद्घोष।
नव-निधियाँ चौदह-रत्नों के स्वामी आप महागुण-कोष।।
द्वादश-कामदेव मनहारी सोलहवें तीर्थेश महान्।
शांतिनाथ जिन! चरण नमूँ नित पाऊँ शाश्वत शांति निधान।।16।।

हर्षित होते कभी नहीं जो संस्तुति से गुणगानों से।
क्रोध-भाव न कभी छू सका निन्दादि अपमानों से।।
उत्तम-शील-व्रतों को ध्याकर परमब्रह्म-पद को पाया।
कुंथुनाथ तव चरण-वंदना-कर मेरा मन हर्षाया।।17।।

समवसरण में हुये विराजित जो सामान्य-केवली-जिन।
संस्तुत वंदित हुये कभी न उनके द्वारा हे स्वामिन्!।।
अन्तर्गण की पूर्ति हेतु है जो सेवित आदर को प्राप्त।
अरहनाथ! तव चरण नमूँ नित पाने निज पद तुम सम आप्त।।18।।

पूरब-भव में रत्नत्रय-व्रत की शुचिता का पा आलोक।
मन-वच-काय विशुद्धि से निज में निज आतम लिया विलोक।।
पावन-पूर्ण-ब्रह्मव्रत जिनने इस भव में अवधार लिया।।
मोहमल्ल मद दलन हेतु नुति मल्लिनाथ! तव चरण हिया।।19।।

महाभाग हो हे स्वामिन्! जो हुये स्वयं ही वैरागी।
ब्रह्मर्षि देवों ने आकर संस्तुति की अतिशयकारी।।
नमः सिद्ध कह स्वयं लोंचकर धार लिये मुनिपद के व्रत।
नित नत हो नुति करता हूँ तव चरणों की हे मुनिसुव्रत!।।20।।

विद्यावन्त तीर्थ के कर्ता अहोभाग प्रभु लिया निहार।
पुलकित तन-मन-विधि-पड़गाहन भक्ति-भाव से दिया आहार।।
महाभाग नृपघर रत्नों की वर्षा पंचाश्चर्य महान्।
नमिनाथ जिनवर की करता नय-प्रमाण से संस्तुति-गान।।21।।

निबल-जीव बन्धन में देखे दयाभाव प्रगटा उर में।
हाय-हाय धिक् विषय भोग तज राजुल रथ मोड़ा गिरि में।।



हुई मुक्ति जग में ना आना रहा प्रयोजन एक महान्।
चरण नमूँ नित आन पधारो मम उर नेमिनाथ भगवान।।22।।

पार्श्वनाथ जिन! धर्मध्यान वा शुक्लध्यान में थे लवलीन।
कमठ किया उपसर्ग भयानक महावृष्टि-वायु-अग्नि।।
दूर किया उपसर्ग प्रभु का फणमण्डप रचकर धरणेन्द्र।
शिवसुख पाऊँबलि-बलि जाऊँचरण शरण दो पार्श्व जिनेन्द्र।।23।।

यह भवसिंधु महादुःखकारी अघ का कारण कहें जिनेश।
देखा सब भवि जीवों को जो डूब रहे पा रहे क्लेश।।
धर्मपोत का अवलम्बन दे खींच लिया है अपनी ओर।
वर्द्धमान जिन! चरण नमूँ द्वय देना भवसागर का छोर।।24।।

श्री सर्वज्ञदेव कृत हितकर दिव्यदेशना उपकारी।
दस विध-धर्म त्रियोग सहित धारण करते जो नरनारी।।
भविजन विमल गुणानुवाद से पुष्पांजलि नित करें प्रदान।
.सकल स्वर्ग वा मोक्ष-लक्ष्मी करती आलिंगन नित मान।।

तीर्थंकर चौबीस का, रचा पद्य अनुवाद।
है ''विमर्श'' अंतिम यही, मिले मुक्ति-प्रासाद।।

।। इति श्री लघु स्वयंभू स्तोत्र ।।

# गोम्मटेस स्तुति

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

नीलकमल दल सम अति सुन्दर सुखकर मनहर युगल-नयन।
विकसित पूर्ण शशांक बिम्ब सम जो अतिशय कमनीय वदन।।
नम्र नासिका अहा! जीतती चंपक सुमनस छवि अभिराम।
गोम्मटेस तव युगल-चरण में नतमस्तक नित करूँ प्रणाम।।1।।

स्वच्छ विमल उज्ज्वल जल सम छवि वाले गोल-कपोल अहा!
नर्तन करते कर्णपाश जिनके विशाल कन्धों पर आ।।
गज सूण्डासम बाहुदण्ड द्वय शोभित अति नभ सम शुचि-धाम।
गोम्मटेस तव युगल-चरण में नतमस्तक नित करूँ प्रणाम।।2।।

दिव्य शंख की महासौम्य छवि जीत रही ग्रीवा कमनीय।
निश्चल अचल मेरु सम जिनका मध्यभाग जो अतिरमणीय।।
हिमगिरि सा उन्नत विस्तृत तव बाहुशिरस् अनुपम अभिराम।
गोम्मटेस तव युगल-चरण में नतमस्तक नित करूँ प्रणाम।।3।।

विन्ध्याचल के अग्र-शिखर पर तप से सदा प्रकाशित आप।
सब शुद्धात्म मुमुक्षुजन के शिखामणि हे प्रखर-प्रताप।।



त्रिभुवन को आनंद प्रदाता पूर्ण चाँद सम हे गुणधाम।
गोम्मटेस तव युगल-चरण में नतमस्तक नित करूँ प्रणाम।।4।।

लिपट गईं माधवी लतायें नख-शिख तक तव तन सुविशाल।
भविजन को तिहुँलोकों में सम कल्पवृक्ष हे जिन! तव ख्याल।।
महाऋद्धि युत् देवगणों से अर्चित हैं द्वय-चरण ललाम।
गोम्मटेस तव युगल-चरण में नतमस्तक नित करूँ प्रणाम।।5।।

अहा! दिगम्बर रूप आपका मनभावन भय से निष्क्रान्त।
अम्बरादि में अनासक्त मन हे विशुद्ध! निश्चय से शान्त।।
महाभयंकर विषधर से पर्शित फिर भी निष्कम्प महान्।
गोम्मटेस तव युगल-चरण में नतमस्तक नित करूँ प्रणाम।।6।।

आशा की अभिलाषा शोषित पोषित समदृष्टि सुवितान।
सर्वदोष के मूल मोह का नाश किया पाया निज ध्यान।।
हे निष्कांक्ष! विरागभाव युत भरत भ्रात में शल्य विराम।
गोम्मटेस तव युगल-चरण में नतमस्तक नित करूँ प्रणाम।।7।।

जो उपाधि से पूर्ण रहित धन-कंचन सकल-संग से दूर।
जो समत्व से अहा! अलंकृत मोह-महामद जेता शूर।।
एक वर्ष तक निराहार उपवास-योग धारा अविराम।
गोम्मटेस तव युगल-चरण में नतमस्तक नित करूँ प्रणाम।।8।।

गोम्मटेस अष्टक अहा! संस्तुतिमय गुणगान।
'नेमिचंद्र आचार्य' ने प्राकृत किया बखान।।1।।

गोम्मटेस थुदि का किया आठ पद्य अनुवाद।
गोम्मटेस की भक्ति से उमड़ा जब आल्हाद।।2।।

गोम्मटेस अष्टक अहा! देता नित आनन्द।
एक यही शुभ भावना, मेंट सकूँ भव फन्द।।3।।

गोम्मटेस तव चरण में नित नुति करूँ प्रणाम।
है ''विमर्श'' अंतिम यही प्राप्त करूँ शिवधाम।।4।।

( इति श्री गोम्मटेस स्तुति )

## श्रावक के षट् कर्त्तव्य

देवपूजा गुरूपास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः।
दानंचेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने-दिने।।
-पद्मनंदि पंचविंशतिका

1. देव-पूजा, 2. गुरु-उपासना, 3. स्वाध्याय, 4. संयम 5. तप और 6. दान - ये छह आवश्यक कार्य प्रत्येक श्रावक को प्रतिदिन करने चाहिए।



## श्री पंच महागुरु भक्ति

पद्यानुवाद - श्रमणाचार्य विमर्शसागर

राजा सुर नागेन्द्र कराते धारण तीन छत्र जिन पर।
गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान-मोक्षसुख-कल्याणक-पाये जिनवर।।
वे जिनेन्द्र हमको भी देवें अचल अनंत-ज्ञान-दर्शन।
अविनाशी अनुपम अनंतबल मंगलमयी ध्यान अर्हन्।।1।।

प्रकट किया जिनने अतिदृढ़ हो ध्यानरूप अग्निमय बाण।
जला दिये हैं जन्म-जरा-मृत्यु तीनों ही नगर महान।।
स्वयं हुआ है प्राप्त जिन्हें अविनाशी अनुपम मुक्ति थान।
देवें उत्तम बोध मुझे भी ऐसे सर्व सिद्ध भगवान्।।2।।

दर्शन-ज्ञान-चरित्र-वीर्य-तप पंचाचार अनल नित साध।
अवगाहन करते हैं नित ही द्वादशांग श्रुतजलधि अगाध।।
आशा की अभिलाषा तजकर पाया जिनने मुक्ति धाम।
मोक्ष लक्ष्मी देवें मुझको सूरि चरण में करूँ प्रणाम।।3।।

अतिशय भीषण दुःखमय सारा महाभयानक भवजंगल।
जहाँ दिखाते तीक्ष्ण नखों युत पापसिंह बल टहल-टहल।।

भव अटवी में भूल गये जो भव्य जीव पा लिये कुपथ।
वंदन उन श्री उपाध्याय को जिनने उन्हें दिखाया पथ।।4।।

क्षीण किया इस नश्वर तन को करके उग्र तपश्चर्या।
दुर्लभ उत्तम धर्मध्यान औ शुक्लध्यान को प्राप्त किया।।
रत्नत्रय में रमण करें जो तपो अंगना करे वरण।
मोक्षमार्ग दर्शायक होवें वंदनीय साधु भगवन्।।5।।

जो यह संस्तुति निशदिन पढ़कर करता पंचगुरु वंदन।
वह अनंतभव सघन-बेल का पलभर में करता छेदन।।
जला डालता पुण्य-पापमय अष्टकर्म वन ईंधन को।
पाता मोक्ष महल सुख वह जो मान्य रहा उत्तम जन को।।6।।

घाति कर्म को नाश कर पाया पद-अर्हन्त।
कर्म-अघाति नाशकर हुये सिद्ध-भगवन्त।।
पंचाचार छत्तीस - गुण धरि आचार्य महान्।
पठन और पाठन निरत उपाध्याय भगवान्।।
ज्ञान-ध्यान-तपलीन जो हैं भवजलधि जहाज।
सुर-नर-किन्नर से अहा! वंदित साधूराज।।
ऐसे पंचमहागुरु इनको नित नवकार।
भव-भव में इनसे करूँ मंगल की दरकार।।7।।



( अंचलिका )

पंचगुरु भक्ति का मैंने, कायोत्सर्ग किया भगवन्।
उसके ही आलोचन की अब, इच्छा करता मेरा मन।।
अष्ट प्रातिहार्यों से मण्डित, परमदेव अर्हत् भगवन्।
ऊर्ध्वलोक के मुकुट विराजे अष्टगुणों के सिद्ध सदन।।
अष्ट महाप्रवचन माता से, संयुत हे आचार्य परम!
आचारादि-श्रुत-उपदेशक, उपाध्यायजी ज्ञान वरम्।
रत्नत्रय गुण के पालन में, तत्पर साधु सदा-सदा।
नित्यकाल करता हूँ अर्चा, पूजन, वंदन, नमन अहा।।
हे प्रभु! मेरे भव दुःखों का, क्षय हो क्षय हो क्षय होवे।
हे प्रभु! मेरे सब कर्मों का, क्षय हो क्षय हो क्षय होवे।
हे प्रभु! मुझको बोधि लाभ हो, सदा सुगति में होय गमन।
हे प्रभु! पाऊँ मरण समाधि, जिन गुण संपत्ति निजधन।।

पंच महागुरु के चरण वंदन का उल्लास।
पंचमहागुरु की शरण मिले यही अरदास।।1।।
पंच महागुरु भक्ति का किया पद्य अनुवाद।
गुरु विराग आशीष से हो न लेश अनवाद।।2।।
पंच महागुरु ही रहें जीवन के आधार।
कर्म नशें यह भावना यही शुद्ध सुविचार।।3।।

# भक्तामर स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

( तर्ज- जीवन है पानी की बूँद, कब मिट जाये रे )

आदिनाथ स्तोत्र महान - जो नर गाये रे।
घाति - अघाति, हो-हो-2, सब कर्म नशाये रे।।
आदिनाथ प्रभु गुण स्तवन - जो नर गाये रे।
जीवन में उसके, हो-हो-2 दुःख ना रह पाये रे।।

भक्तामर नत मुकुट मणि, झिलमिल होती लड़ी-लड़ी।
ज्ञान ज्योति प्रगटी टूटे, पाप कर्म की कड़ी-कड़ी।।
भवसागर में गिरते जन, कर्मभूमि का प्रथम चरण।
आदिनाथ प्रभुवर जिनके, चरण युगल हैं आलम्बन।।
सम्यक् वन्दन कर, मनवा हर्षाये रे।।1।।

द्वादशांग का जो ज्ञाता, तत्त्वज्ञान पटु कहलाता।
मन-मोहक स्तुतियों से, सुरपति प्रभु के गुण गाता।।
त्रिभुवन चित्त लुभाऊँगा, मैं भी प्रभु गुण गाऊँगा।
आदिनाथ तीर्थेश प्रथम, निश्चय उनको ध्याऊँगा।।
प्रभु की भक्ति ही, संकल्प जगाये रे।।2।।



देव-सुरों से है पूजित, पादपीठ जो अतिशोभित।
तज लज्जा स्तुति गाने, तत्पर हूँ मैं बुद्धि रहित।।
चन्द्रबिम्ब जल में जैसे, अभी पकड़ता हूँ वैसे।
बालक ही सोचा करता, विज्ञ मनुज सोचे कैसे।।
बालक हूँ फिर भी, मन तो उमगाये रे।।3।।

चन्द्रकांति सम गुण उज्ज्वल, कहने सुरपति में ना बल।
हे गुणसागर! कौन पुरुष, कहने को हो सके सबल।।
प्रलयकाल की वायु प्रचण्ड, नक्र-चक्र हों अति उद्दण्ड।
ऐसा सिंधु भुजाओं से, पार करेगा कौन घमण्ड।।
प्रभु तेरी भक्ति, नौका बन जाये रे।।4।।

भक्ति भाव उर लाया हूँ, स्तुति करने आया हूँ।
शक्ति नहीं मुझ में फिर भी, शक्ति दिखाने आया हूँ।।
हिरणी वन को जाती है, सिंह सामने पाती है।
निज शिशु रक्षा हेतु मृगी, आगे लड़ने आती है।।
प्रीतिवश हिरणी, कर्तव्य निभाये रे।।5।।

मैं अल्पज्ञ हूँ अकिंचन, हँसी करें प्रभु विद्वतजन।
करती है वाचाल मुझे, भक्ति आपकी हे स्वामिन्।।

जब बसन्त ऋतु आती है, कोयल कुहु-कुहु गाती है।
सुन्दर आम्र मंजरी ही, तब कारण बन जाती है।।
प्रभु तेरी मूरत, मेरे मन भाये रे।।6।।

नाथ! आपके संस्तव से, भवि जीवों के भव-भव से।
बँधे हुये जो पापकर्म, क्षण भर में क्षय हों सबके।।
भँवरे जैसा तम काला, जग को अंधा कर डाला।
ऐसा तम रवि किरणों ने, आकर तुरत मिटा डाला।।
प्रभु तेरी भक्ति, अघकर्म मिटाये रे।।7।।

अल्पज्ञान की धारा है, स्तुति को स्वीकारा है।
चित्त हरे सत्पुरुषों का, नाथ! प्रभाव तुम्हारा है।।
नलिनी दल पर बिन्दुजल, लगता जैसे मुक्ताफल।
है प्रभाव नलिनीदल का, कांतिमान कब होता जल।।
नलिनीदल वा जल, अपने में समाये रे।।8।।

दूर रहे प्रभु गुण स्तवन, दोष रहित जो अति पावन।
नाथ! आपकी नाम कथा, पापों का करती खण्डन।।
दिनकर दूर रहा आये, क्षितिज लालिमा छा जाये।
सरोवरों में कमलों को, प्रभा प्रफुल्लित कर जाये।।



शुभनाम तेरा, होंठों पे आये रे।।9।।

जगन्नाथ! हे जगभूषण! जो भी प्राणी गाता गुण।
इसमें क्या आश्चर्य प्रभो! होता है तुम सम तत्क्षण।।
लाभ ही क्या उस स्वामी से, वैभवधारी नामी से।
निज सेवक को जो निजसम, करे नहीं अभिमानी से।।
तुझसा स्वामी ही, सेवक को भाये रे।।10।।

अपलक रूप निहार रहा, दर्शनीय संतोष महा।
तुझसा देव न देवों में, रागद्वेष की खान कहा।।
क्षीर सिन्धु का मीठा जल, सुन्दर शशि सम कांति धवल।
पीकर, क्यों पीना चाहे, लवण सिंधु का खारा जल।।
तुझ बिन प्रभु मुझको, कोई और न भाये रे।।11।।

देख लिये हमने त्रिभुवन, तुझसा सुन्दर न भगवन्!
प्रशम कांतिमय अणुओं से, रचा गया प्रभु! तेरा तन।।
निश्चित वे अणु थे उतने, नाथ! देह में हैं जितने।
अन्य देव का प्रभु! तुमसा, रूप कहाँ देखा किसने।।
तेरी छवि मेरे, नयनों में समाये रे।।12।।

विजित अखिल उपमाधारी, सुर-नर-उरग नेत्रहारी।

कहाँ आपका मुखमण्डल, शोभा जिसकी अति प्यारी।।
कहाँ कलंकी वह राकेश, निष्प्रभ हो जब आये दिनेश।
ढाक पुष्प सम पाता क्लेश, न खुश्बू न कांति विशेष।।
मनहर मुख की छवि, कभी दूर न जाये रे।।13।।

शुभ्र कलाओं से शोभित, पूनम का शशि मन मोहित।
नाथ! आपके उज्ज्वल गुण, करें लोकत्रय उल्लंघित।।
नाथ! आप जिसके आधार, विचरें वे इच्छा अनुसार।
तीन लोक में रोक सके, है किसको इतना अधिकार।।
प्रभु तेरी शरणा, भवपार लगाये रे।।14।।

स्वर्ग अप्सरायें आईं, नृत्यगान कर शर्माईं।
क्या आश्चर्य तनिक मन में, गर विकार न कर पाईं।।
प्रलयकाल की वायु चले, पर्वत भू से आन मिले।
किन्तु सुमेरु शिखर भी क्या, प्रलय वायु से कभी हिले।।
प्रभु तेरे मन का, कोई पार न पाये रे।।15।।

जिसमें धूम न बाती हो, तेल न जिसका साथी हो।
हे अखंड! हे अविनाशी! तीनों लोक प्रकाशी हो।।
प्रलयकाल की वायु चले, मणिज्योति कब हिले-डुले।



जगत्प्रकाशी दीप अपूर्व, ज्ञान ज्योति भी नित्य जले।।
प्रभु तेरी ज्योति, मेरा दीप जलाये रे।।16।।

नाथ! आपकी वो महिमा, सूरज की न कुछ गरिमा।
युगपत् लोक प्रकाशी हो, रवि रहता सहमा-सहमा।।
आप सूर्य सम अस्त नहीं, राहू द्वारा ग्रस्त नहीं।
मेघ तेज को छिपा सकें, ऐसा बंदोबस्त नहीं।।
प्रभु तेरी भक्ति, मिथ्यात्व नशाये रे।।17।।

राहू कभी नहीं ग्रसता, कृष्ण मेघ से न दबता।
सदा उदित रहनेवाला, मोह महातम को दलता।।
अहा! मुखकमल अतिअभिराम, अद्वितीय शशि बिम्ब ललाम।
लोकालोक प्रकाशी है, ज्ञान आपका हे गुणधाम।।
स्तुति प्रभु तेरी, सम्यक्त्व जगाये रे।।18।।

मुखशशि का जब दर्श किया, नाथ! तिमिर द्वय नाश दिया।
दिन में रवि से, रजनी में शशि से नाथ! प्रयोजन क्या।।
धान्य पक चुका लगे ललाम, स्वर्णिम खेत हुये अभिराम।
जल को लादे झुके हुये, नाथ! बादलों का क्या काम।।
प्रभु आप जैसी, हम फसल उगाये रे।।19।।

पूर्णरूप से है विकसित, ज्ञान आप में ही शोभित।
हरि-हरादि देवों में क्या, हो सकता जो नित्य क्षुभित।।
तेज महामणि में जैसा, नाथ! आप में भी वैसा।
सूर्य-किरण से जो दमके, काँच शकल में न वैसा।।
केवलज्ञानी ही, अज्ञान नशाये रे।।20।।

हरि-हरादि का भी दर्शन, मान रहा अच्छा भगवन्!
उन्हें देखकर अब तुझमें, हुआ पूर्ण संतोषित मन।।
प्रभु! तेरे दर्शन से क्या? साथ चाहता मन तेरा।
इस भूमण्डल पर कोई, देव कभी-भी फिर मेरा।।
जन्मों-जन्मों में, न चित्त लुभाये रे।।21।।

सौ-सौ नारी माँ बनतीं, सौ-सौ पुत्रों को जनतीं।
नाथ! आप सम तेजस्वी, पुत्र न कोई जन्म सकीं।।
नभ में अगणित तारागण, सभी दिशा करती धारण।
सूर्य उदित होता जिससे, पूर्व दिशा ही है कारण।।
माता मरुदेवी, धन्य-धन्य कहाये रे।।22।।

सूरज सम तेजस्वी हो, परम पुमान यशस्वी हो।
मुनिजन कहते तमनाशक, निर्मल आप मनस्वी हो।।



नाथ! आपको जो पाते, मृत्युञ्जयी वो कहलाते।
किन्तु आप बिन शिवपथ का, मार्ग न कोई बतलाते।।
जो तुमको ध्याये, तुम सम बन जाये रे।।23।।

आद्य!अचिंत्य!असंख्य!अनंत!,अनंगकेतु!अक्षय!कहें संत।
विदित योग! विभु! योगीश्वर! ब्रह्मा! कहते हे भगवंत।।
कोई कहता ज्ञानस्वरूप, नाथ! आपको अमल अनूप।
कोई कहता एक! अनेक! अविनाशी! इत्यादि रूप।।
नाना नामों से, तेरी महिमा गाये रे।।24।।

अमर-पूज्य केवलज्ञानी, अतः बुद्ध हो हे ज्ञानी।
त्रिभुवन में सुख शांति रहे, अतः तुम्हीं शंकर ध्यानी।।
मोक्षमार्ग विधि बतलाते, अतः विधाता कहलाते।
व्यक्त किया पुरुषार्थ अतः, पुरुषोत्तम जन-जन गाते।।
प्रभु! तुमको ब्रह्मा, शंकर, विष्णु बताये रे।।25।।

त्रिभुवन का दुःख करें हरण, अतः आपको नमन-नमन।
क्षितितल के निर्मल भूषण, नाथ! आपको नमन-नमन।।
हे परमेश्वर! त्रिजगशरण, सदा आपको नमन-नमन।
भववारिधि करते शोषण, अतः आपको नमन-नमन।।

प्रभु! तेरा वन्दन, चन्दन बन जाये रे।।26।।

हे मुनीश! इन नाम सहित, गणधर सन्तों से अर्चित।
इसमें क्या आश्चर्य प्रभो! हुये सर्वगुण तव आश्रित।।
दोष स्वप्न में दूर अरे, अहंकार में चूर अरे।
आश्रय पा कामीजन में, इठलाते भरपूर अरे।।
इसमें क्या विस्मय, वो पास न आये रे।।27।।

शुभ अशोक तरु अति उन्नत, कंचन सा तव तन शोभित।
अंधकार को चीर रहीं, ऊर्ध्वमुखी किरणें विकसित।।
जैसे दिनकर आया हो, मेघों बीच समाया हो।
किरण जाल फैलाकर के, स्वर्णिम तेज दिखाया हो।।
सूरत के आगे, सूरज शर्माये रे।।28।।

मणि किरणों से हुआ न्हवन, जगमग-जगमग सिंहासन।
नाथ! आपका कंचन सा, उस पर परमौदारिक तन।।
उदयाचल का तुंग शिखर, रश्मि लिये आया दिनकर।
ऐसा शोभित होता है, सिंहासन पर तन प्रभुवर।।
तन की यह आभा, नजरों को बुलाये रे।।29।।

कुन्दपुष्प सम श्वेत चँवर, इन्द्र ढुराते हैं तन पर।
स्वर्णमयी काया प्रभुजी, लगती मनहर अतिसुन्दर।।



कनकाचल का तुंग शिखर, शुभ्र ज्योत्सना सा निर्झर।
झर-झर, झर-झर झरता हो, शोभित चौंसठ शुभ्र चँवर।।
प्रभु की सेवा में, सुरलोक भी आये रे।।30।।

है शशांक सम कांति प्रखर, तीन छत्र शोभित सिर पर।
मणि मुक्ता की आभा से, झिलमिल-झिलमिल हो झालर।।
रवि का दुर्द्धर प्रखर प्रताप, रोक दिया है अपने आप।
प्रगट कर रहे छत्रत्रय, त्रिभुवन के परमेश्वर आप।।
ईशान इन्द्र आकर, महिमा दिखलाये रे।।31।।

मधुर, गूढ़, उन्नत-स्वर में, दुन्दुभि बजता नभपुर में।
दशों दिशायें गूँज रहीं, धूम मची है सुरपुर में।।
तीन लोक के भविजन को, बुला रहा सम्मेलन को।
धर्मराज की हो जय-जय, घोष करे रजनी-दिन को।।
तीनों लोकों में, यश ध्वज फहराये रे।।32।।

पारिजात-सुन्दर-मन्दार-सन्तानक-नमेरू सुखकार।
कल्पवृक्ष के ऊर्ध्वमुखी-पुष्प अहा! गंधोदक धार।।
वर्षा नित होती रहती, मन्द पवन संग-संग बहती।
मानों दिव्य वचनमाला, प्रभु की नभ से ही गिरती।।

प्रभु! ऐसी शोभा, कहीं नजर न आये रे।।33।।

नाथ! आपका भामण्डल, शोभित जैसे सूर्य नवल।
जीत रहा है रजनी को, चन्द्रकांति सम हो शीतल।।
त्रिभुवन चित्त लुभाते जो, कांतिमान कहलाते जो।
भामण्डल की आभा से, लज्जित हो शर्माते वो।।
भामण्डल भवि के, भव सात दिखाये रे।।34।।

स्वर्ग-मोक्ष पथ बतलाती, सत्य धर्म के गुण गाती।
त्रिभुवन के भवि जीवों को, विशद अर्थ कर दिखलाती।।
नाथ! दिव्यध्वनि खिरती है, सदा अमंगल हरती है।
महा-लघु भाषाओं में, स्वयं परिणमन करती है।।
प्रभु की दिव्यध्वनि, भवरोग मिटाये रे।।35।।

नूतन विकसित स्वर्ण कमल, कांतिमान नख अतिनिर्मल।
फैल रही आभा जिनकी, सर्वदिशाओं में उज्ज्वल।।
आप गमन जब करते हैं, सहज कदम जब धरते हैं।
दो सौ पच्चिस स्वर्णकमल, विबुध चरणतल रचते हैं।।
नभ में प्रभु! तेरा, अतिशय दिखलाये रे।।36।।

भूति न त्रिभुवन में ऐसी, धर्मदेशना में जैसी।



प्रातिहार्य वसु समवसरण, अन्य देव में न वैसी।।
अंधकार के हनकर की, जैसी आभा दिनकर की।
वैसी ही आभा कैसे, हो सकती तारागण की।।
तीर्थंकर जैसा, ना पुण्य दिखाये रे।।37।।

झर-झर झरता हो मदबल, जिसका चंचल गण्डस्थल।
भ्रमरों के परिगुंजन से, क्रोध बढ़ रहा खूब प्रबल।।
ऐरावत गज आ जाये, भक्त जरा न भय खाये।
नाथ! आपके आश्रय का, जन-जन यह अतिशय गाये।।
प्रभु की भक्ति से, भय भी टल जाये रे।।38।।

चीर दिया गज गण्डस्थल, मस्तक से झरते उज्ज्वल।
रक्त सने मुक्ताओं से, हुआ सुशोभित अवनीतल।।
ऐसा सिंह महा विकराल, बँधे पाँव सा हो तत्काल।
नाथ! आपके चरणयुगल, आश्रय से हो भक्त निहाल।।
प्रभु! तेरी भक्ति, निर्भयता लाये रे।।39।।

प्रलयकाल की चले बयार, मचा हुआ हो हाहाकार।
उज्ज्वल ज्वलित फुलिंगों से, दावानल करती संहार।।
जपे नाम की जो माला, नाम मंत्र का जल डाला।

शीघ्र शमन हो दावानल, नाम बड़ा अचरज वाला।।
भक्ति ही ऐसा, अचरज दिखलाये रे।।40।।

लाल-लाल लोचनवाला, कंठ कोकिला सा काला।
जिह्वा लप-लप कर चलता, नाग महाविष फण वाला।।
नाम नागदमनी जिसके, हृदय बसी हो फिर उसके।
शंका की न बात कोई, साँप लाँघ जाता हँसके।।
भक्तों को विषधर, न कभी डराये रे।।41।।

उछल रहे हों जहाँ तुरंग, गजगर्जन हो सैन्य उमंग।
बलशाली राजा रण में, दिखा रहे हों अपना रंग।।
सूर्य किरण सेना लाता, तिमिर कहाँ फिर रह पाता।
नाम आपका जो जपता, रण में भी ध्वज फहराता।।
प्रभु के भक्तों को, कब कौन हराये रे।।42।।

क्षत-विक्षत गज भालों से, हुआ सामना लालों से।
जलसम रक्त नदी जिसमें, तरणातुर वह सालों से।।
नाथ! जीतना हो दुर्जय, रण में होती शीघ्र विजय।
नाथ! पाद-पंकज वन का, लिया जिन्होंने भी आश्रय।।
प्रभु के भक्तों को, जय तिलक लगाये रे।।43।।



मगरमच्छ एवं घड़ियाल, भीमकाय मछली विकराल।
महाभयानक बड़वानल, उठती हों लहरें उत्ताल।।
डगमग-डगमग हों जलयान, चीत्कार कर रहे पुमान।
नाम स्मरण से भगवन्! शीघ्र पहुँचते तट पर यान।।
प्रभु की भक्ति से, संकट कट जाये रे।।44।।

उपजा महा जलोदर भार, वक्र हुआ तन का आकार।
जीने की आशा छोड़ी, शोचनीय है दशा अपार।।
नाथ! चरण रज मिल जाये, रोग दशा भी ढल जाये।
सच कहता हूँ देह प्रभो! कामदेव सी खिल जाये।।
चरणों की रज भी, औषधि बन जाये रे।।45।।

सिर से पैरों तक बन्धन, जंजीरों से बाँधा तन।
हाथ-पैर, जंघाओं से, रक्त बह रहा रात और दिन।।
बंदीजन करलें शुभकाम, नाम मंत्र जप लें अविराम।
नाथ! आपकी भक्ति से, बन्धन भय पाता विश्राम।।
प्रभु की भक्ति से, बन्धन खुल जाये रे।।46।।

सर्प, दवानल, गज चिंघाड़, युद्ध, समुद्र व सिंह दहाड़।
नाथ! जलोदर हो चाहे, बन्धन का भय रहे प्रगाढ़।।

नाथ! आपका स्तुतिगान, करता है जो भी मतिमान।
भय भी भयाकुलित होकर, शीघ्र स्वयं होता गतिमान।।
प्रभु की भक्ति से, भय भी भय खाये रे।।47।।

गुण बगिया में आये हैं, अक्षर पुष्प खिलाये हैं।
विविध पुष्प चुन भक्ति से, स्तुतिमाल बनाये हैं।।
करे कण्ठ में जो धारण, मनुज रहे न साधारण।
'मानतुंग' सम मुक्तिश्री, आलिंगित हो बिन कारण।।
प्रभु गुण की महिमा, निज गुण विकसाये रे।।48।।

मानतुंग उपसर्गजयी, मानतुंग हैं कर्मजयी।
मानतुंग की अमरकृति, 'भक्तामर' है कालजयी।।
मानतुंग की छाया है, मानतुंग सम-ध्याया है।
भक्तिभाव से पद्य रचा, आदिनाथ गुण गाया है।।
भक्ति की शक्ति, मानतुंग बताये रे।।

अशुभ छोड़ शुभ पाऊँगा, शुभ तज शुद्ध ही ध्याऊँगा।
कर निश्चय-व्यवहार स्तुति, सिद्धों सा सुख पाऊँगा।।
रहा 'विमर्श' यही मन में, भक्ति सदा हो जीवन में।
गुरु 'विराग' आशीष मिले, साँस रहे जब तक तन में।।
प्रभु तेरी भक्ति, मुझे प्रभु बनाये रे।।

( इति श्री भक्तामर स्तोत्र पद्यानुवाद )



# भक्तामर स्तोत्र

रचयिता – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

श्री भक्तामर स्तोत्र महान, रचा गुरु मानतुंग ने जान
भक्ति जब हृदय समाई है।
आदि विधाता आदिनाथ की महिमा गाई है।
भक्तामर नत मुकुटमणि की, महाकांति के भासक
अंतर पाप सघनतम निर्मल ज्ञानज्योति से नाशक
भवसागर में गिरते जन, चरण द्वय उनको आलम्बन
आदि युग रीति बताई है ऽऽ
आदिब्रह्म की छवि हमारे हृदय समाई है।।1।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

द्वादशांग के ज्ञाता सुरगुरु तव गुण संस्तुति गावें,
त्रिभुवन के भवि जीवों का संस्तुति गा चित्त लुभावें,
ऐसे चतुर बुद्धि के देव, नाथ! करते चरणों की सेव
करूँगा मैं भी इन्द्र समान ऽऽ
प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ तव संस्तुति निश्चय मान।।2।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

पादपीठ जो इन्द्र महर्द्धिक देवों से भी पूजित,
करूँ लाज तज संस्तुति में मतिहीन भक्ति से पूरित
कहता नहीं कोई मतिमान, शीघ्र ही होकर के गतिमान

नाथ! यह जो अविचारी है ऽऽ
बालक जल में चाँद पकड़वे क्रिया हमारी है।।3।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

चंद्रकांति सम उज्ज्वल गुण कहने को हे गुणसागर!
सुरगुरु नहीं समर्थ, कौन फिर पुरुष समर्थ यहाँ पर?
होवे प्रलय काल का जोर, पवन का शोर महाघनघोर
मच्छ से पूरित जलधि अपार ऽऽ
कौन भुजाओं से समर्थ जो करे तैरकर पार?।।4।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

हे मुनीश! हूँ बुद्धिहीन मुझमें न कोई शक्ति
संस्तुति को तैयार हुआ कारण है तेरी भक्ति
हिरणिया करती नहीं विचार, शक्ति से हीन किन्तु तैयार
सिंह से भय नहिं खाती है ऽऽ
निजशिशु रक्षा हेतु प्रीतिवश रण में जाती है।।5।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

विज्ञजनों का हासपात्र हूँ अल्पज्ञान का धारी
संस्तुति हेतु बलात् मुखर करती प्रभु भक्ति तुम्हारी
दुल्हनियाँ सी ऋतु सजी बसंत, कोयलिया हर्षित हो अत्यंत
करे कुहु कुहु का उच्चारण ऽऽ
सुन्दर आम्रमंजरी का समुदाय एक कारण।।6।।



चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

ज्यों सब लोक व्याप्त रजनी का भौंरे सा तम काला
रवि की किरण मात्र ने पल में छिन्न-भिन्न कर डाला
आपकी संस्तुति से हे नाथ! देहधारी जीवों के साथ
आठ अघकर्म बँधे भारी ऽऽ
क्षय हो जाते क्षण भर में जो भव सन्तति धारी।।7।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

किया जा रहा शुरू तव स्तवन अल्पबुद्धि के द्वारा
चित्त हरे सज्जनों का इसमें एक प्रभाव तुम्हारा
कमलिनी दल पर जैसे जल, दिखाई देता मुक्ताफल
कान्ति मुक्ता की अति प्यारी ऽऽ
जल का नहीं प्रभाव कमलिनी दल का ही भारी।।8।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

दूर रहे स्तोत्र आपका, सर्व दोषगत पावन
नाथ! आपकी नामकथा ही है समर्थ अघनाशन
दूर रहने पर भी आफताब, सरोवर में अपने ही आप
कमल विकसित हो जाते हैं ऽऽ
रवि की प्रभा मात्र का यह अतिशय जन गाते हैं।।9।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

हे जगभूषण! जगन्नाथ! जो तव गुण संस्तुति गाते

इसमें क्या आश्चर्य अगर वह तुम समान हो जाते?
लाभ क्या उस स्वामी से नाथ?आश्रित सेवक रहे अनाथ
लोक में जो वैभव धारी ऽऽ
निज सम करने वाला स्वामी है आश्रयकारी॥10॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

देख आपकी वीतरागता पलक नहीं झुक पाते,
अन्य देव को देख कभी, सन्तोष नहीं कर पाते।
चन्द्रमा जैसी कान्ति विमल, क्षीर सागर का मीठा जल,
जो पीकर प्यास बुझायेगा ऽऽ
लवण सिंधु का जल फिर क्या वह पीना चाहेगा?॥11॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

वीतरागमय आभा के परमाणु धरा पर जितने
सभी आप में हुए समाहित, वह भी थे उतने
न कोई तुमसा देव महान, सभी हैं राग द्वेष की खान
आपकी छवि अति प्यारी है ऽऽ
तीन लोक की सुन्दरता भी तुमने हारी है॥12॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

कहाँ चाँद का बिम्ब लोक में जो सकलंक कहाता
होता ढाकपत्र सम निष्प्रभ दिनकर जब आ जाता



आपका अतिसुन्दर आनन, लगे सबको अति मनभावन
उरग सुर नर लोचन हारी ऽऽ
जीत लिए हैं अखिल विश्व के सब उपमाधारी॥13॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

नाथ! आपके उज्ज्वल गुण करते त्रिलोक उल्लंघित
पूनम के सम्पूर्ण चाँद की शोभा से अतिशोभित
जिसके आप एक आधार, विचरते वे इच्छा अनुसार
रोकने का किसको अधिकार ऽऽ
नाथ! आपकी तीन लोक में महिमा अपरम्पार॥14॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

स्वर्ग अप्सरा चित्त लुभाने हेतु धरा पर आईं
इसमें क्या आश्चर्य?आपको तनिक डिगा न पाईं
प्रलय की चलती महाबयार, मचा हो जग में हाहाकार
शिखर क्या गिरि तक हिल जाते ऽऽ
क्या सुमेरू का शिखर कभी तूफान हिला पाते?॥15॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

धूमवर्तिका नेह रहित फिर भी त्रयलोक प्रकाशी
प्रलय वायु भी बुझा सकी न हे अखण्ड! अविनाशी!
प्रकाशित रहते हो दिनरात, अपूरब दीप आप हे नाथ!

मिटा दी जग की अंधियारी ऽऽ
कहलाते हो जगत्प्रकाशक परम ज्योति धारी॥16॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

अस्त न होते आप सूर्य सम राहु नहीं ग्रस पाता
तेरा महाप्रभाव श्याम मेघों से न छिप पाता
सूर्य से भी अति महिमावान, आपका निर्मल केवलज्ञान
जो लोकालोक प्रकाशी है ऽऽ
हे मुनीन्द्र! मन तेरा संस्तुति का अभिलाषी है॥17॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

मोह महातम दलने वाला सदा उदित रहता
करता त्रिजग प्रकाश राहु न बादल से दबता
मुखकमल अतिशय आभावान, अनुपम इन्दु बिम्ब समान
स्वच्छ निर्मल अविकारी है ऽऽ
नाथ! आपसा बन जाऊँ, भावना हमारी है॥18॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

नाथ! आपका मुख शशि जब सम्पूर्ण तिमिर का नाशक
तब दिन में रवि, रजनी में शशि क्या हो आवश्यक?
धान पक चुका खेत अभिराम, नाथ! मेघों का फिर क्या काम?
नीर लादे विनम्र भारी ऽऽ



तू किसान मैं धान तुँ ही रक्षा का अधिकारी॥19॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

पूर्ण शुद्धतम ज्ञान आप में जैसा नाथ! सुशोभित
हरिहरादि देवों में वैसा कभी उदित न शोभित
महामणियों का विमल प्रकाश, स्वयं ज्योतिर्मय शुभ्र उजास
क्या कभी काँच खण्ड पाता? ऽऽ
स्वयं नहीं, जो रवि किरणों से झिलमिल हो जाता॥20॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

हरिहरादि देवों का दर्शन भी मैं उत्तम मानूँ
उन्हें देखने से मन तुझमें ही संतोषित जानूँ
आपके दर्शन से क्या नाथ?आपका ही चाहे मन साथ
आपकी ही नित पूजा है ऽऽ
चित्त लुभाये भूमण्डल पर देव न दूजा है॥21॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

सौ-सौ नारी सौ-सौ सुत की बनी प्रसूता जननी
तुम सा सुत क्या जन्म सकी कोई माता इस अवनी?
दिशायें सभी करें धारण, शुभ्र ज्योतिर्मय तारागण
किन्तु दैदीप्यकिरण वाला ऽऽ
सूर्य उदित होता प्राची से करने उजियाला॥22॥

चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

दिनकर सम तेजस्वी निर्मल मोह तिमिर के नाशक
हे मुनीन्द्र! पुरुषोत्तम! ऐसा मानें मुनिजन श्रावक
पाकर नाथ! आपको पास, करें मृत्युंजय कर्म विनाश
मुक्ति के होते अधिकारी ऽऽ
किन्तु आप बिन मार्ग न कोई आतम हितकारी।।23।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

नाथ आपको विभु! योगीश्वर! विदितयोग! अविनाशी!
आदि! अनन्त! असंख्य! अचिन्त्य! अनंगकेतु! ब्रह्मा भी।
निर्मल! ज्ञानस्वरूप! अनेक! आपको कहता कोई एक
ईश! इत्यादिक नामों से ऽऽ
गणधर आदि सन्त पुकारें निर्मल भावों से।।24।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

केवलज्ञानी आप अतः हो बुद्ध! विबुध से पूजित
नाथ! आप ही हो शंकर! करते त्रिलोक सुख पूरित
शिवपथ विधि विधान से धीर, आप ही ब्रह्मा हो हे वीर!
न कोई अवनी पर उत्तम? ऽऽ
व्यक्त किया निज शिव स्वरूप प्रभु तुम ही पुरुषोत्तम।।25।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

त्रिभुवन की पीड़ा हरने वाले प्रभु! तुम्हें नमन हो



भूमण्डल के निर्मल भूषण हे विभु! तुम्हें नमन हो
आप अखिलेश जगत के नाथ, आप बिन तीनों लोक अनाथ
नमन स्वीकारो बारम्बार ऽऽ
हे भवसिन्धु सुखाने वाले! तुम्हें नमन शतबार।।26।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

हे मुनीश! यदि सर्वगुणों ने लिया आपका आश्रय
इसमें क्या आश्चर्य? लोक में तुमसा नहीं उपाश्रय
दोष भी अहंकार में चूर, स्वप्न में भी प्रभु तुमसे दूर
आपका दर्श नहीं पाते ऽऽ
रागी-द्वेषी देवों में आश्रय पा इठलाते ।।27।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

उन्नत तरु अशोक के आश्रित कंचन सा तन शोभित
विमल ऊर्ध्व किरणें फैलाकर करता जन-मन मोहित
उज्ज्वल दीप्ति रश्मिवाला, मिटाता तम अतिशय काला
बादलों के समीप आकर ऽऽ
शोभित जैसे दिनकर नभ में किरणें फैलाकर।।28।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

मणि किरणों के अग्रभाग से शोभित है सिंहासन
नाथ! आपका उस पर कंचन सा परमौदारिक तन

होता शोभित उसी प्रकार, तुंग उदयाचल शिखर मँझार
अतुल सौन्दर्य विहँसता हो ऽऽ
नभ में रश्मि फैलाकर आदित्य दमकता हो।।29।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

नाथ! आपकी कंचन जैसी कांतिमान यह काया
कुन्दपुष्प सम श्वेत चँवर ढुरते नित सुर के द्वारा
हो कनकाचल का तुंग शिखर, ज्योत्सना का झर-झर निर्झर
बह रहा हो मानो भारी ऽऽ
कंचन तन पर चँवर सुशोभित सुन्दर मनहारी।।30।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

हे विभु! समवशरण में सिर पर तीन छत्र हैं मंगल
मुक्ता की झालर से शोभित चन्द्रकांति सम उज्ज्वल
रवि किरणों का प्रखर प्रताप, रोकते हैं जो अपने आप
सुयश जग को बतलाते हैं ऽऽ
त्रिभुवन के परमेश्वर हो यह प्रगट दिखाते हैं।।31।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

तीन लोक के जीवों को सत्संग कराने वाला
हो सद्धर्मराज की जय, जयघोष लगाने वाला
नभ में बजता दुन्दुभि नाद, चलो प्रभु शरणा तजो प्रमाद



प्रगट करता प्रभु यश मंगल ऽऽ
मधुर गूढ़ उन्नत स्वर से पूरित है दिग्मंडल।।32।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

पारिजात मन्दार नमेरु सन्तानक वा सुन्दर
कल्पवृक्ष के सुरभित सुमनों की वर्षा मनहर
साथ बहती शुभ मन्द बयार, सुगंधित जलवृष्टि सुखकार
मिटाने भवि की भव ज्वाला ऽऽ
मानो नभ से उतर रही प्रभु वचनों की माला।।33।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

जग के चमकीले पदार्थ हो कांतिहीन शरमाते
नाथ! आपके भामण्डल की आभा में खो जाते
करोड़ों सूर्य उदित हों साथ, आपकी तन द्युति ऐसी नाथ
चन्द्रमा से भी अति शीतल ऽऽ
जीत रहा है रजनी को भी तव तन भामण्डल।।34।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

त्रिभुवन को सद्धर्मतत्त्व का अर्थ विशद बतलाती
भविजन को जो इष्ट स्वर्ग-अपवर्ग मार्ग दिखलाती
ऐसी दिव्यध्वनि तव नाथ, सदा चाहूँ भव-भव में साथ
द्रव्य-गुण-पर्यय धारी है ऽऽ

महा लघु सब भाषा में परिणमन स्वभावी है॥35॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

विकसित स्वर्णाभामय नूतन कमल पुञ्ज हों जैसे
फैल रही चहुँ आभा जिनकी कान्तिमान नख ऐसे
भवि जीवों का पुण्यप्रताप, गमन होता है अपने आप
जहाँ प्रभु!कदम आप रखते ऽऽ
दो सौ पच्चिस स्वर्णकमल सुर चरण तले रचते॥36॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

इस प्रकार धर्मोपदेश में जो विभूति प्रभु पाई
हरिहरादि देवों में वैसी देती नहीं दिखाई
दमकता हो नभ में मार्तण्ड, हजारों किरणें लिए प्रचण्ड
मिटाती गहन तिमिर, आभा ऽऽ
तारागण दैदीप्य किन्तु न दिखती यह आभा॥37॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

झर-झर झरते मद से कलुषित चंचल गण्डस्थल हो
भ्रमते भौंरों के गुंजन से बेसुध क्रोध प्रबल हो
ऐरावत सम महाविशाल, आ रहा हो गज मानो काल
भक्त फिर भी ना भय खाता ऽऽ
नाथ! आप जब शरणागत के हो आश्रयदाता॥38॥



चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

करते अति चिंघाड़ गजों के चीर दिए गण्डस्थल
रक्त सने गजमुक्ता छवि से किया विभूषित भूतल
ऐसा सिंह महाविकराल, भक्त को छू भी सके मजाल
पड़ा हो पंजों बीच भले ऽऽ
हे प्रभु! चरणयुगल गिरि का आश्रय ही उन्हें फले॥39॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

प्रलयकाल की महावायु से उत्तेजित अग्नि सम
चहुँदिक फिंके फुलिंगे उज्ज्वल करने विश्व भसम
अहो! ऐसी दावाग्नि अपार, मचा हो जग में हाहाकार
शीघ्र होती है स्वयं शमन ऽऽ
एक आपके नाम नीर का ही प्रभाव स्वामिन्!॥40॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

महाकुपित रक्ताक्ष समद कोकिला कंठ सम काला
डस लेता फुंकार मार विष उगल महाफण वाला
ऐसा नाग महाविकराल, किन्तु कर सके ना बाँका बाल
भक्त भय छोड़ लाँघ जाता ऽऽ
नाथ! आपका नाम नागदमनी औषधिदाता॥41॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

समर भूमि में शूरवीर नृप अतुल सैन्य बल धारी

गर्जन करते गज अश्वों का हो कोलाहल भारी
छिड़ा हो अति भीषण संग्राम, भक्त प्रभु! जपे आपका नाम
विजय श्री तिलक लगाती है ऽऽ
उदित सूर्य की किरण तिमिर को शीघ्र भगाती है।।42।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

भालों से बेधित गज, बहती रक्त धार दरिया सम
उतर तैरने आतुर योद्धा शत्रु भार करने कम
जिसने लिया आपका नाम, चरण वन किया नाथ! विश्राम
विजय श्री गले लगाती है ऽऽ
अपराजेय शत्रु पर मंगलध्वज फहराती है।।43।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

जलती जलधि बीच बड़वानल चलती प्रलय हवायें
क्षुभित भयंकर मगरमच्छ घड़ियाल निगलना चाहें
उठ रही हों लहरें उत्ताल, हुए डगमग जलयान विशाल
भक्त क्षण भर न घबड़ाते ऽऽ
नाथ! आपके सुमिरन से तत्काल पार जाते।।44।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

महाजलोदर रोग भार से हुआ वक्र तन जिनका
अतिदयनीय दशा उनकी विश्वास नहीं जीवन का



भक्त प्रभु जपे आपका नाम, शीघ्र ही होता रोग विराम
लगा ले पद रज अमृत मान ऽऽ
नाथ! चरण रज से होता तन कंचन मदन समान।।45।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

नख से शिख तक जंजीरों से कसकर जकड़ दिया तन
लहुलुहान जंघायें घिस-घिस, महाभयानक बन्धन
जपता नाम मन्त्र की जाप, प्रगट हो उसका स्वयं प्रताप
सभी बन्धन खुल जाते हैं ऽऽ
तीन लोक के बन्धन भी उससे भय खाते हैं।।46।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

महामत्त गजराज, सिंह, दावानल, अहि, संग्राम
जलधि, जलोदर, बन्धन का भय पाता है विश्राम
नाथ! यह है स्तोत्र महान, भक्ति से पढ़ता जो मतिमान
अहा! निर्भय हो जाता है ऽऽ
भय भी भयाकुलित होकर फिर पास न आता है।।47।।
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2

विविध वर्ण ही पुष्प रम्य, गुणक्यारी से चुन लाये
गूँथा संस्तुति हार भक्ति से, नाथ! अमर गुण गाये
जो भवि करे कण्ठ धारण, रहे फिर क्या वह साधारण?
लोक-परलोक विभव पाये ऽऽ
''मानतुंग'' सम-शिवरमणी हो अवश उसे चाहे।।48।।

चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2
मानतुंग आचार्य ने रचा भक्ति काव्य अति प्यारा
छन्द चुना जो बसन्ततिलका सब छन्दों में न्यारा
जीवन बनता तभी महान, हृदय में हो नित प्रभु गुणगान
अमिट बनती यश गाथा है-SS
आदिनाथ! वृषभेष! आपके चरणों माथा है॥1॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2
नाथ! आपके समवसरण सी अशोक नगरी पाऊँ
पदपंकज की संस्तुति से तुम सम अशोक बन जाऊँ
हृदय में पलता एक ''विमर्श'' सदा हो भेदज्ञान उत्कर्ष
आत्मज्ञायक स्वभाव पाऊँ
छोड़ शुभाशुभ भाव सभी शुद्धोपयोग धयाऊँ॥2॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2
मानतुंग की भक्तामर कृति सदियों अमर रहेगी
पढ़े-सुने जो भविक भक्ति से स्वर्ग मोक्षफल देगी
होवे रवि सम केवलज्ञान, बनूँ मैं अहा! सिद्ध भगवान
किया पद्यानुवाद चितधर
''गुरु विराग'' का शुभाशीष ही इसमें हेतु प्रखर॥3॥
चरण में वंदन है-चरण रज चंदन है-2
॥ इतिश्री भक्तामर स्तोत्र ॥



# भक्तामर स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

भक्तामर नतवान मुकुट की मणिप्रभा को किया प्रकाश,
सघन पापतम के समूह का ज्ञान ज्योति से किया विनाश ।
भव समुद्र में पतित जनों को चरण युगल हैं आलम्बन,
आदि जिनेश्वर आदिनाथ को मैं त्रियोग से करूँ नमन ॥1॥

द्वादशांगमय तत्त्वबोध से प्रकट बुद्धि चातुर्य अपार,
तीन लोक का चित्त हरण करने वाले स्तोत्र उदार ।
संस्तुत आदि जिनेश हुये सुरपति के द्वारा कर गुणगान,
करता हूँ निश्चय से मैं भी जिनवर का मनहर गुणगान ॥2॥

अर्चित है देवों के द्वारा जिन जिनेश का चरणासन,
बुद्धिहीन तज लाज संस्तुति करने उद्यत मेरा मन ।
जल में पड़े शशांक बिम्ब को पकड़े, कहो कौन मतिमान?
बालक ही पकड़ा करता हर्षित होकर सहसा गतिमान ॥3॥

हे गुणवारिधि! चन्द्रकांति सम उज्ज्वल नंत गुणों की खान,
तव गुण सुरगुरु कह न सका फिर कौन पुरुष है क्षमतावान?
मगरमच्छ युत् जलधि भयंकर महाप्रलय की चले बयार,
कौन भुजाओं से समर्थ जो सिंधु तैरकर कर ले पार? ॥4॥

हे मुनीश! हूँ बुद्धिहीन निर्बल अशक्त नहिं शक्तिवान्,
भक्तिवश तव संस्तुति करने छोड़ दिया है शक्ति प्रमान ।
शिशु की रक्षा हेतु मृगी निज बल विचार क्या करती है?
प्रीतिवश मृगपति के सम्मुख जाने से क्या डरती है? ।।5।।

अल्पज्ञान का धारी हूँ विज्ञों का हास पात्र प्रभुवर,
भक्ति आपकी करती मुझको जबरन संस्तुति हेतु मुखर ।
मधुऋतु में पिक मधुर कंठ से करती कुहु-कुहु उच्चारण,
उसमें होती है अति सुन्दर आम्र मंजरी ही कारण ।।6।।

जग के सब देही जीवों के बँधे हुये भव-भव के पाप,
हे प्रभु! तव स्तवन से होते क्षण में क्षय अपने ही आप ।
सर्व लोक में व्याप्त हुआ हो गहन निशातम अखिल वितान,
होता सूर्य किरण से छिन भिन चाहे काला भ्रमर समान ।।7।।

नाथ! मंदबुद्धि हूँ फिर भी शुरू करूँ तव संस्तुति गान,
चित्त हरे सुजनों का इसमें तव प्रभाव ही निश्चय मान ।
नलिनीदल पर शोभित होते नीर बिन्दु मुक्ताफल सम,
नीर बिन्दु का क्या प्रभाव? है नलिनी दल का ही उत्तम ।।8।।

दोष रहित निर्दोष आपका स्तवन रहे सर्वथा दूर,
कथा मात्र करती जीवों के पापों को हन चकनाचूर ।



दूर रहे आदित्य क्षितिज पर ज्यों ही फैले प्रभा प्रकाश,
सरोवरों में जलज प्रफुल्लित हो करते हैं स्वयं विकास ।।9।।

हे त्रिलोकभूषण! हे जगपति! इसमें अचरज की क्या बात?
जो करता संस्तुति सद्गुण से पा जाता तव सम सौगात ।
धनिक वही जो स्वाश्रित जन को निज सम करते वैभववान,
नहीं करें तो कहो उन्हें क्यों होगा सेवा का अरमान? ।।10।।

अपलक दर्शनीय हे प्रभुवर! देख आपको परम पुनीत,
कभी नहीं संतुष्ट हुये अन्यत्र सुजन के नयन विनीत ।
चंद्रकांति सम अति धवलोज्ज्वल, पीकर जल क्षीरोदधि का,
कौन चखेगा खारा पानी इच्छुक हो कालोदधि का? ।।11।।

शान्त रागमय कान्तिमान भूमण्डल पर अणु थे जितने,
आप हुये निर्मापित उनसे निश्चय वह अणु थे उतने ।
हे त्रिभुवन के आभूषण! हे अद्वितीय तव रूप महान्,
नहीं दूसरा जग में कोई रूप आप सम हे भगवान! ।।12।।

कहाँ आपका मुखमण्डल सुर नर धरणेन्द्र नेत्र-हारी,
जिसके द्वारा तीन लोक के विजित अखिल उपमाधारी ।
कहाँ कहो वह चन्द्रबिम्ब जो रहता सदा कलंक मलिन,
ढाकपत्र सम फीका पड़ता दिन में होकर तेज विहीन ।।13।।

उज्ज्वल पूर्ण शशांक बिम्ब की कला कलाओं से बढ़कर,
नाथ! आपके गुण शोभित त्रय लोकों का उल्लंघन कर ।
हे त्रिलोक के ईश्वर! जिसके एक मात्र तुम ही आधार,
कौन रोक सकता है उनको विचरें इच्छा के अनुसार? ।।14।।

देव अप्सरा किंचित भी गर तव मन ना ला सकी विकार,
इसमें क्या आश्चर्य नृत्य कर-कर हारी निज मन को मार?
प्रलयकाल की महापवन से पर्वत तक हिल जाते जब,
ऐसे ही क्या मेरु शिखर भी रंचमात्र हिल पाते तब? ।।15।।

नाथ! आप हो धूम रहित बाती बिन तेल पूर से हीन,
स्वयं प्रकाशित रहने वाले करने प्रकट त्रिलोक प्रवीण ।
गिरि शिख डगमग करने वाली कभी न छूती पवन प्रचण्ड,
ऐसे अनुपम दीप आप हे जगत्प्रकाशी! ज्योति अखण्ड ।।16।।

हे मुनीन्द्र! तुम अस्तहीन हो ग्रस न पाया राहु कभी,
शीघ्र प्रकाशित करने वाले एक समय में लोक सभी ।
बादल भी नहिं रोक सके हैं जिसका महाप्रभाव कभी,
ऐसी अतिशय गरिमा वाले आप सूर्य से तेजस्वी ।।17।।

सदा उदित रहने वाला है मोह महातम का नाशक,
राहु कभी भी ग्रस न सका, ना मेघों द्वारा ही ग्रासक ।



नाथ! आपका विश्व प्रकाशक मुख सरोज अति आभावान,
अहो! अपूर्व शशांक बिम्ब शोभित न दूजा शोभावान ।।18।।

मैंटा करता अंधकार जब नाथ! आपका मुख इन्दु,
अर्थ रहा क्या दिन में रवि से और रात्रि में बिम्बेन्दु?
भूमण्डल पर पके हुये जब धान्य खेत हों शोभावान,
अर्थहीन उन जल को लादे, नम्र घनों का क्या अहसान? ।।19।।

सर्व द्रव्य - पर्याय प्रकाशक जैसा शोभित तुझमें ज्ञान,
हरिहरादि देवों में वैसा कभी न होता शोभावान ।
झिलमिल-झिलमिल मणियों का जैसा महत्व देखा जाता,
क्या किरणाकुल काँच शकल का वह महत्व लेखा जाता? ।।20।।

श्रेष्ठ मानता हूँ मैं हरि-हर आदि देव का ही दर्शन,
जिनके दर्शन से अब तुझमें ही सन्तोषित होता मन ।
नाथ! आपके दर्शन से क्या? जिससे इस भूमण्डल पर,
लुभा सके न चित्त हमारा, जनम जनम में देव अपर ।।21।।

शत-शत नारी शत-शत सुत को अपनी कोख जना करतीं,
तुमसे सुत को किन्तु न कोई जननी कभी जना करती ।
ताराओं के गण को धारण करती सभी दिशाएँ पर,
पूर्व दिशा ही जन सकती है दीप्ति किरण वाला दिनकर ।।22।।

हे मुनीन्द्र! माना करते हैं तुमको परम पुरुष मुनिजन,
विमल दिवाकर सम तेजस्वी अंधकार का करें हनन ।
तुम्हें प्राप्त कर भलीभाँति जन मृत्यु पर जय पाते हैं,
तुम्हें छोड़ शिवपद का शिवपथ अन्य नहीं बतलाते हैं ।।23।।

तुमको अक्षय! विभु! अचिन्त्य! अरु विदितयोग! वा योगीश्वर!
आदिपुरुष! निज ब्रह्म रमण करने वाले ब्रह्मा! ईश्वर! ।
एक! अनेक! असंख्य! अमल! ज्ञानस्वरूप! नंगकेतु! अनंत,
इत्यादिक नामों से प्रभुवर सदा पुकारा करते सन्त ।।24।।

देवगणों से अर्चित पूजित बुद्धि बोध से तुम ही बुद्ध,
त्रिभुवन को सुख शान्ति प्रदाता अतः तुम्हीं हो शंकर शुद्ध ।
शिवपथ की विधि के विधान से तुम्हीं विधाता हो हे धीर!
किया श्रेष्ठ पुरुषत्व व्यक्त सो तुम ही पुरुषोत्तम गंभीर! ।।25।।

त्रिभुवन की पीड़ा हरने वाले हे स्वामिन्! तुम्हें नमन,
हे क्षितितल के अमर अमल आभूषण! करता तुम्हें नमन ।
हे त्रिजगत के परम विभूति युत परमेश्वर! तुम्हें नमन,
हे भवसिन्धु सुखाने वाले आदि जिनेश्वर! तुम्हें नमन ।।26।।

हे मुनीश! यदि सर्वगुणों ने लिया आपका ही आश्रय,
इसमें क्या आश्चर्य? कि उनको दूजा मिला नहीं आश्रय ।



अन्य-अन्य देवों के आश्रित दोष गर्व से भरे हुये,
कभी तुम्हें न देख सके वे स्वप्न मात्र में डरे हुये ।।27।।

अति उन्नत अशोक तरु-आश्रित अतिशय अमल आपका रूप,
ऊर्ध्व दिशा में दीप्तिवान किरणें बिखेरता हुआ अनूप ।
सघन मेघ के निकट सूर्य का जैसे बिम्ब चमकता है,
तम नाशक स्पष्ट आपका वैसा रूप दमकता है ।।28।।

नाना रंग सहित मणियों की किरणों के तेजस्व शिखर,
शोभित होता कंचन सा तव स्वच्छ वदन सिंहासन पर ।
तम हरने ही फैला हो जैसे नभ तल पर रश्मि निकर,
मानो उदयाचल के उन्नत शिख से निकला हो दिनकर ।।29।।

कुन्द पुष्प से उज्ज्वल शोभित ढुरते हुये चँवर सुन्दर,
स्वर्ण कान्ति सम कान्तिमान शोभित होते हैं तव तन पर ।
मानो मेरु शिखर का ऊँचा उन्नत तट हो स्वर्णमयी,
शुचि निर्झर की शुचि जलधारा उदित चन्द्र सम उछल रही ।।30।।

चन्द्रप्रभा सम कांतिमयी प्रभु! तीन छत्र से शोभित आप,
ऊपर स्थित होकर जिनने रोक दिया रवि रश्मि प्रताप ।
रत्न प्रकर झालर जिनकी अति शोभा स्वतः बढ़ाते हैं,
मानो तीन जगत का परमेश्वर होना प्रगटाते हैं ।।31।।

मधुर गूढ़ ऊँचे निनाद से पूर दिया है दिग्मंडल,
तीन लोक के प्राणी को देने शुभ संगम भूति कुशल ।
प्रगट करे सद्धर्मराज की जय हो! जय हो! का उद्घोष,
नभ में तव यश विशद रूप से करे निनादित दुन्दुभिघोष ।।32।।

पारिजात, सुन्दर, नमेरु, मन्दार और सन्तानक आदि,
कल्पवृक्ष के ऊर्ध्वमुखी पुष्पों की वृष्टि रही अनादि ।
गन्धोदक बिन्दु से युत शुभ मन्द-मन्द मारुत भी साथ,
मानो दिव्यवचन बिखरें तव पंक्ति बाँध नभ से हे नाथ! ।।33।।

शोभनीक भामण्डल की अति कान्ति आपकी रहे विभो!
तीन लोक के कांतिमान सब अर्थ कांति भी लज्जित हो ।
उदित दिवाकर की अविरल अति संख्या वाली दीप्ति अरे,
चन्द्र बिम्ब सम चारु प्रभा से निशा जीत तम हरण करे ।।34।।

स्वर्ग और शिवमार्ग प्रदर्शित करने से मुनिजन को इष्ट,
तीन लोक को एकमात्र सद्धर्म तत्त्व का कथन विशिष्ट ।
नाथ आपकी दिव्य-ध्वनि होती जिसमें विशदार्थ कहा,
सब भाषाओं में स्वभाव से परिणत गुण से युक्त अहा! ।।35।।

विकसित नव पंकज समूह सम स्वर्णाभा युत खिले हुये,
नख की अति अभिराम किरण शिख दो सौ पच्चिस कमल हुये ।



हे जिनेन्द्र! द्वय चरण आपके जहाँ कदम बढ़ जाते हैं,
वहीं देवगण स्वर्ण कमल की रचना करते जाते हैं ।।36।।

इस प्रकार जो हुई आपको प्राप्त विभूति हे जिनवर!
धर्म देशना के विधान में वह न पा सके देव अपर ।
आभा सघन तिमिर की नाशक दिनकर में होती जितनी,
उदित हुये नक्षत्रों की क्या अतुल कांति होती उतनी? ।।37।।

झरते गन्धद्राव से कुलषित चंचल ऐसा गण्डस्थल,
मँडराते मदान्ध भौंरों के नाद से बढ़ा क्रोधाविल ।
ऐरावत सम उद्धत हाथी भी गर सम्मुख आ जाये,
देख आपका शरणागत उससे भी जरा न भय खाये ।।38।।

निकल रहे हैं रक्त से सने गजमुक्ता के पुञ्ज धवल,
अवनीतल हो उठा सुशोभित भेद दिया गज गण्डस्थल ।
पंजों बीच पड़ा हो किन्तु बँधे पाँव सा होय मृगेन्द्र,
नहीं आक्रमण करता उन पर जो चरणाश्रित होय जिनेन्द्र ।।39।।

प्रलयकाल की महावायु से प्रेरित उत्कट अग्नि समान,
चहुँदिक फिकें फुलिंगे उज्ज्वल धधक रहा दावाग्नि वितान ।
लप-लप लपटें आती सम्मुख मानो करने विश्व भसम,
तेरा नाम कीर्तन जल ही पूर्ण रूप से करता शम ।।40।।

अति उद्धत हो तीव्र क्रोध से लाल-लाल लोचन वाला,
फणा उठाये सम्मुख आये नाग कण्ठ पिक सा काला ।
लाँघा करते पैरों से वे हो निशंक विषधर के पास,
जिस नर के मानस में हो तव नाम नागदमनी का वास ।।41।।

उछल हिनहिनाते अश्वों वा गज गर्जन का घोर निनाद,
रणभूमि में करें नृपों की सेनायें बल का उन्माद ।
उदित सूर्य की किरण शिखा ज्यों करती दूर सघन तम जाल,
नाम आपका जपने से त्यों हो सेना छिन-भिन तत्काल ।।42।।

भालों से क्षत-विक्षत गज के तन से बहे रक्त जलधार,
अति उतावले वीर सुभट झट उसे तैरकर करते पार ।
रण में जीते शत्रु पक्ष को, जो दुर्जय कहलाते हैं,
वह जन तव पद कमल वनाश्रित विजयश्री पा जाते हैं ।।43।।

जिस समुद्र में कुपित भयंकर मगरमच्छ एवं घड़ियाल,
महाभयानक बड़वानल हों भीमकाय मछली विकराल ।
तीव्र उछलती लहरों पर डगमग-डगमग करते जलयान,
शीघ्र पार होते हो निर्भय जो करते तव ध्यान पुमान ।।44।।

वक्र हो गये महाभयंकर उपजा जिन्हें जलोदर भार,
छोड़ चुके जीवन की आशा शोचनीय हो दशा अपार ।



तव पदपंकज रज से करते देह लिप्त जो अमृत मान,
वे मनुष्य हो जाते बिल्कुल कामदेव के रूप समान ।।45।।

जंजीरों से जकड़ दिया तन नख से ग्रीवा तक सम्पूर्ण,
लोह बेड़ियों से घिस-घिसकर लहूलुहान जंघायें पूर्ण ।
गर ऐसे बंदीजन तेरा नाम मन्त्र जपते दिन-रात,
शीघ्र स्वयं बंधन भय छूटे इसमें विस्मय की क्या बात? ।।46।।

मदोमत्त हाथी, मृगेन्द्र, दावानल और भयंकर साँप,
युद्ध, समुद्र, जलोदर या बन्धन का भय भी जाता काँप ।
ऐसा भय भी भयाकुलित हो शीघ्र नाश को होता प्राप्त,
जो गतिमान आपके इस स्तवन को पढ़ता है, हे आप्त! ।।47।।

हे जिन! तव गुण महापुञ्ज की यह गुणमय स्तुति माला,
गूँथ भक्ति से विविध वर्ण के चारु विचित्र प्रसून खिला ।
जग में जो जन अहोभाग से करें कण्ठ में नित धारण,
''मानतुंग'' सम अवश हुई सी मोक्षलक्ष्मी करे वरण ।।48।।

।। इति श्री भक्तामर स्तोत्र ।।

# कल्याणमन्दिर स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

चिन्तामणि प्रभु पारस को, हृदय बुलायें रे।
भव-भव के संकट, हो-हो-2 हम शीघ्र नशायें रे।।

कल्याणों के मंदिर हैं, अघहर सौख्य समुन्दर हैं।
भवदुःख से भयभीतों को, अभयदान से सुन्दर हैं।।
डूबे जो भवसिंधु-जल, हैं जहाज द्वय चरणकमल।
पार्श्व प्रभु की भक्ति में, लीन रहें जो भवि प्रतिपल।।
वन्दन करके हम, प्रभु स्तुति गायें रे।।1।।

सुरपति विस्तृत मतिवाला, स्तुतियाँ करने वाला।
गौरवसागर पार्श्व तेरी, गा न सका स्तुतिमाला।।
कमठ शठी का गिरि सम मान, भस्म करने को अग्नि समान।
जयति-जयति जय जय जय जय, जयवन्तो पारस भगवान।।
फिर भी निश्चय से, हम स्तुति गायें रे।।2।।

नाथ! आपका शुद्ध स्वरूप, अविनाशी है अमल अनूप।
कहने को असमर्थ प्रभो! मन्दबुद्धि साधारण रूप।।



दिनकर प्राची से आता, उल्लू अन्धा हो जाता।
ढीठ उलूक शिशु लेकिन, रवि महिमा की जिद लाता।।
फिर भी वे शिशु क्या, वर्णन कर पायें रे।।3।।

नाथ! मोहक्षय से मानव, आत्म गुणों का कर अनुभव।
निश्चय ही निजबुद्धि से, तव गुण गिनना न संभव।।
प्रलयकाल जब आता है, सागर जल बह जाता है।
प्रगट रत्नराशि को भी, कौन पुरुष गिन पाता है।।
स्वामिन्! हम फिर भी, साहस दिखलायें रे।।4।।

मैं जड़बुद्धि अज्ञानी, आप गुणों की हैं खानि।
तव गुण स्तुति करने की, करता है मन नादानी।।
बालक निज बुद्धि अनुसार, बाहु युगल को शीघ्र पसार।
स्वामिन्! क्या नहिं बतलाता, सागर का कितना विस्तार।।
बालक सम हम भी, स्तुति को आयें रे।।5।।

नाथ! आपके निर्मल गुण, कह न सके योगी भगवन्।
फिर मुझको अवकाश कहाँ, जो तव गुण का करूँ कथन।।
हे स्वामिन्! यह स्तुति गान, है अविचारित क्रिया महान।
ज्यों पक्षी निज भाषा में, करते-रहते मधुरिम गान।।

स्तुतियाँ करके, आनन्द मनायें रे।।6।।

दूर रहे स्तोत्र अरे, नाम आपका जो सुमरे।
हे अचिन्त्य महिमा वाले, वह भव दुःख को दूर करे।।
ग्रीष्मकाल आतप भारी, पद्म सरोवर दुःखहारी।
शीतल सुरभित वायु भी, ज्यों लगती अति सुखकारी।।
प्रभु! नाम तेरा, हम हृदय से ध्यायें रे।।7।।

हे प्यारे पारस भगवन्! रहते हो जिस हृदयासन।
क्षणभर में हों शिथिल अरे, सघन कठोर कर्मबन्धन।।
जैसे चन्दन के तरु पर, वन मयूर आते क्षणभर।
लिपटे हुए भुजंगों की, कुण्डलियाँ खुलतीं डरकर।।
भक्ति बिन कैसे, हम कर्म नशायें रे।।8।।

सूर्य तेज फैले भू पर, हो गोपाल दृष्टिगोचर।
पशु चोर तत्काल भगें, उसी जगह पशु को तजकर।।
वैसे ही तुमको भगवन्! देखें जो भी मानव जन।
शत उपद्रवों से सहसा, बच जाते हैं हे स्वामिन्!
प्रभु! आप मुझको, हर पल नजरायें रे।।9।।

नाम आपका जो धारक, वो खुद भवसागर पारक।



साथ आपको ले जाता, नाथ! आप कैसे तारक?
पवन भरी हो जब अन्दर, मशक तैरती जल अन्दर।
शीघ्र किनारा पाती है, वायु को भी संग लेकर।।
वायु बिन कैसे, मशकें तिर पायें रे।।10।।

अहो! विष्णु ब्रह्मा शंकर, कामदेव आगे किंकर।
कामदेव को जीत लिया, अतः तुम्हीं जिन तीर्थंकर।।
यद्यपि अग्नि बुझाता जल, किन्तु प्रगट जब बड़वानल।
तब जल खुद ही जल जाता, काम न आता जल का बल।।
रति काम तुमको, निज गुरु बनायें रे।।11।।

आप प्रभो! गरिमाधारी, हृदय धरें भवि संसारी।
लघु भवसागर तिर कैसे? बन जाते शिव अधिकारी।।
अहो! आपकी क्या महिमा, अहो! आपकी क्या गरिमा।
चिन्तन से भी दूर अहो, आप महाजन की महिमा।।
प्रभु! तुमको ध्याकर, हम भी तिर जायें रे।।12।।

निज चैतन्य प्रकाश किया, क्रोध प्रथम ही नाश दिया।
आश्चर्य प्रभु! फिर कैसे? कर्म चोर का नाश किया।।
सो जैसे शीतल हिमपात, होता है प्रभु! यदि दिन-रात।

नील वृक्ष वाले वन को, नहीं जलाता क्या हे नाथ!
प्रभु! आप जैसे, हम कर्म नशायें रे।।13।।

हे परमात्मरूप भगवन्! जपें निरन्तर योगीजन।
हृदयकमल के मध्य करें, नाथ! आपका अन्वेषण।।
ज्यों निर्मल पवित्र कान्ति, कमल बीज की उत्पत्ति।
एक कर्णिका ही कारण, नहीं दूसरी हो सकती।।
निज शुद्ध आतम, उर मध्य दिखायें रे।।14।।

जो भविजन करते नित ध्यान, हे जिनेश! पारस भगवान।
क्षणभर में तन को तजकर, बन जाते परमात्म समान।।
जैसे स्वर्णशिला का बन्ध, तीव्र अग्नि का हो सम्बन्ध।
शुद्ध स्वर्ण पर्याय प्रगट, स्वर्ण शिला पर्याय अबन्ध।।
निर्बन्ध आतम, इस विधि ही पायें रे।।15।।

भविजन जिस तन में ध्याते, नाथ! आपको हैं पाते।
उस तन को भी फिर कैसे, नाशवान कह नश जाते।।
सो मध्यस्थ महाजन जो, विग्रह शान्त करें ही वो।
है वस्तु स्वरूप ऐसा, क्यों आश्चर्य किसी को हो।।
प्रभु! ध्यान से ही, विग्रह नश पायें रे।।16।।



इस जग में जो बुद्धिमान, करें अभेद बुद्धि से ध्यान।
संसारी अन्तर आतम, हो जाता परमात्म समान।।
जल में अमृत का चिन्तन, करते जो विश्वासी जन।
विष विकार का निश्चय ही, वमन करें वो हे स्वामिन्!
सच्ची श्रद्धा से, प्रभु! सम बन जायें रे।।17।।

रागद्वेष न छू पाते, वीतमोह प्रभु! कहलाते।
हरिहरादि की बुद्धि से, परवादी तुमको ध्याते।।
पाण्डु रोग हो गया जिसे, शंख श्वेत न दिखे उसे।
विविध वर्णवाला दिखता, रोगी कहता सत्य उसे।।
निज-निज दृष्टि से, सब तुमको ध्यायें रे।।18।।

दिव्यध्वनि खिरती जिस काल, भविजन होते खूब निहाल।
मानवजन तो दूर रहें, तरु भी शोक रहित तत्काल।।
सूर्य उदय जब होता है, जगत अरे क्या सोता है?
कमलादिक वृक्षों के संग, जगत बोधमय होता है।।
दिव्यध्वनि सुनके, सब शोक मिटायें रे।।19।।

पुष्पवृष्टि करते सुरगण, डंठल नीचे क्यों स्वामिन्!
है आश्चर्य बड़ा भारी, किन्तु युक्ति इसमें भगवन्।।

निकट आपके जो आते, शुभ मन वाले कहलाते।
कर्मबन्ध रूपी डंठल, स्वयं अधोगति को पाते।।
कर्मों के बन्धन, खुद ही खुल जायें रे।।20।।

हृदयोदधि से प्रगट गभीर, वाणी अमृतमय हे धीर!
भविजन निज कर्णाञ्जलि से, पीकर पाते ज्ञान शरीर।।
चिदानंद के अनुभव से, कर्म नशाते भव-भव के।
अजर-अमर पद को पाकर, स्वामी हों निज वैभव के।।
दिव्यध्वनि सुनकर, मिथ्यात्व नशायें रे।।21।।

उज्ज्वल चौंसठ चँवर अहा! देव ढुराते हर्ष महा।
हो सुदूर अति नम्रीभूत, ऊपर जाते यही कहा।।
जो भवि करता प्रभु नमन, होता उसका ऊर्ध्वगमन।
निश्चय निर्मल भावों से, भाव शुभाशुभ करे शमन।।
चौंसठ चँवरों से, हम भक्ति दिखायें रे।।22।।

रत्नजड़ित शुभ सिंहासन, श्याम वर्ण प्रभु! सुन्दर तन।
सुन गंभीर दिव्यवाणी, भवि मयूर का नाचे मन।।
लगता स्वर्ण सुमेरु पर, श्याम मेघ ही हुये मुखर।
देख रहे हों भव्य मयूर, अतिशय आनंदित होकर।।



सिंहासन पर तन, लख भवि हर्षायें रे।।23।।

भामण्डल की नीलप्रभा, जगमग-जगमग हुई सभा।
तरु अशोक के पत्रों की, लगती है फीकी शोभा।।
चेतन पुरुष जो ध्याता है, निकट आपको पाता है।
वीतरागता प्रगटाकर, तुम सम ही बन जाता है।।
भामण्डल में भी, भव सात दिखायें रे।।24।।

दुन्दुभि नभ में बजती है, शब्द चतुर्दिक करती है।
त्रिभुवन के भवि जीवों को, सूचित करने कहती है।।
भो प्राणी! आलस्य तजो, अशुभ भाव का कारण जो।
मुक्तिपुरी को ले जाते, सार्थवाह प्रभु पार्श्व! भजो।
दुन्दुभि को सुनकर, भवि शरण में आयें रे।।25।।

नाथ! आप त्रिभुवन आधार, किया प्रकाशित लोक अपार।
तारागण परिवार सहित, नहीं रहा शशि का अधिकार।।
अतः छत्र-तन धारणकर, तारागण मोती लेकर।
छल से फिर लेने अधिकार, आया हो शशि निश्चय कर।।
छत्रत्रय प्रभु जी, तव गौरव गायें रे।।26।।

समवसरण अतिशय सुन्दर, वर्तुल परकोटे अन्दर।

माणिक-स्वर्ण-रजत से जो, बने हुये हैं अति सुन्दर।।
कान्ति प्रताप सुयशवाला, मानों त्रयजग रच डाला।
ऐसी शोभित होती है, परकोटों की यह माला।।
कमलासन ऊपर, अतिशय दिखलायें रे।।27।।

भक्ति से होकर अभिभूत, इन्द्र मुकुट हों नम्रीभूत।
दिव्यमाल मुकुटों को तज, हो तव चरणों आश्रयभूत।।
सो यह ठीक ही है स्वामी! अच्छे मनवाले प्राणी।
तव समीप ही रमते हैं, नहीं रमें बन परगामी।।
इन्द्रादिक अपना, सौभाग्य मनायें रे।।28।।

भव समुद्र से विमुख सदा, प्रभु जी तारणहार अहा।
अनुगामी भवि तिरते हैं, निश्चय ही यह सत्य कहा।।
घट विपाक से युक्त विभो! कर्म विपाक रहित तुम हो।
हे त्रिभुवन अधिपति! फिर भी, घट सम तारणहार अहो।।
हम भक्त तुमको, निज घट में पायें रे।।29।।

जब त्रिभुवन के हो ईश्वर, फिर निर्धन कैसे प्रभुवर!
होते न लिपिबद्ध कभी, है स्वभाव जबकि अक्षर।।
नहीं आपको मति - श्रुतज्ञान, हुआ प्रगट इससे अज्ञान।



सतत् स्फुरित फिर कैसे, विश्व प्रकाशी केवलज्ञान।।
जनपालक कैसे, फिर आप कहायें रे।।30।।

पूर्व कर्म के अनुसारा, नाथ! कमठ शठ के द्वारा।
किया गया उपसर्ग बहुत, कर न सका कुछ बेचारा।।
गगन धूलि से नहलाया, छू न सका तेरी छाया।
कर्म धूलि से हुआ मलिन, और निराशा को पाया।।
अपनी करनी पर, ये खुद पछतायें रे।।31।।

कमठ दैत्य बनकर आया, मेघ गर्जना को लाया।
चम-चम बिजली मूसलधार, दुस्तर पानी बरसाया।।
सो वह पानी मूसलधार, बना कमठ को ही तलवार।
पाप कर्म का बन्ध किया, जो भवसागर का विस्तार।।
प्रभु! आप फिर भी, करुणा बरसायें रे।।32।।

मुख से अग्नि ज्वालायें, गले मुण्ड की मालायें।
बिखरे केश कुरूप महा, अजगर भी निगला चाहें।।
भूत - पिशाचों का तांडव, मूरख कमठासुर दानव।
खुद भव दुःख बढ़ाया था, सही यातनायें भव-भव।।
पारस प्रभु! जैसी, हम क्षमा जगायें रे।।33।।

हे त्रिलोक अधिपति भगवन्! धन्य-धन्य संसारी जन।
छोड़ जगत जंजाल सभी, आप भक्ति में हुये मगन।।
हो गुणानुरागी नत भाल, शास्त्रविधि से करें त्रिकाल।
द्वय चरणों की आराधन, पृथ्वी पर वे भक्त निहाल।।
प्रभु! ऐसी भक्ति, हम भी नित भायें रे।।34।।

नाथ! मानता हूँ यह मैं, इस अपार भवसागर में।
कभी भक्ति से नहीं सुना, नाम आपका प्रभु! मैंने।।
नाम आपका पावन मंत्र, जो सुनले हो वही स्वतंत्र।
विपद सर्पिणी आ सकती, क्या समीप करने परतंत्र।।
प्रभु! नाम तेरा, हम नित ही ध्यायें रे।।35।।

हे मुनीश! भव-भव में भी, इच्छित फल देनेवाली।
तव द्वय पावन चरणों की, पूजा अर्चा कभी न की।।
अतः नहीं इसभव सम्मान, तिरस्कार का हूँ स्थान।
राग-द्वेष की भँवरों से, चित्त क्षुभित है कष्ट महान।।
प्रभु! तव पूजा से, इच्छित फल पायें रे।।36।।

मोहतिमिर से ढके नयन, अतः पूर्व में हे स्वामिन्!
एक बार भी भाव सहित, नहीं किये प्रभु! तव दर्शन।।



यदि दर्श प्रभु! हो जाता, बन्ध कर्म का खो जाता।
कर्मोदय से जन्म-जरा-मृत्यु दुःख कैसे आता।।
प्रभु! दर्श करके, अब मोह हटायें रे।।37।।

नाथ! जन्म-जन्मांतर में, निश्चय मुझ अज्ञानी ने।
दर्शन-पूजन सुनकर भी, अहो! भक्ति से हिरदय में।।
किया कभी भी न धारण, यही एक दुःख का कारण।
सचमुच भावशून्य किरिया, नहिं फलदायक भवतारण।।
भावों का मंदिर, हम आज बनायें रे।।38।।

नाथ! आप हो दीनदयाल, शरणागत के हो प्रतिपाल।
करुणासागर! पुण्यनिधि! हे महेश! यतिश्रेष्ठ! सुकाल।।
करता भक्ति सहित नमन, दया करो मुझ पर स्वामिन्!
दुःख अंकुर का नाश करो, पावन करदो हृदयासन।।
हे देव! तुमसे, हम आश लगायें रे।।39।।

हे त्रिलोक पावनकर्ता! शरणागत के दुःखहर्ता!
जग विख्यात तेरी महिमा, भवि के कर्म दलन कर्ता।।
पाकर तेरे चरण कमल, कर न सका प्रभु! भाव विमल।
तव गुण चिन्तन ध्यान बिना, यह जीवन होगा निष्फल।।

कर्मों ने मारा, हा! खेद जतायें रे।।40।।

हे विदिताखिल वस्तुसार! हे देवेन्द्र पूज्य! जगतार!
हे त्रिभुवनपति! हे स्वामिन्! है फरियाद यही दरबार।।
दुःखदायी भवसागर में, आज दुःखों का हूँ घर मैं।
करो सुरक्षित करो पवित्र, दयासिन्धु! तव चाकर मैं।।
फरियादी दर से, खाली नहिं जायें रे।।41।।

नाथ! तुम्हीं हो एक शरण, आलम्बन के योग्य चरण।
चरण कमल की भक्ति का, यदि कुछ भी फल हो स्वामिन्।।
तो इसभव पर भव-भव में, नाथ! आप स्वामी होवें।
तुम सम ही बन सकूँ प्रभो, भवसागर का दुःख खोवें।।
हे नाथ! तुमको, न कभी भुलायें रे।।42।।

इस प्रकार हे जिन भगवान! समबुद्धि भवि करते ध्यान।
निर्मल मुख-सरोज अपलक, लखते रहते लक्ष्य महान।।
रोम-रोम होता पुलकित, अंग-अंग होता विलसित।
रचते हैं स्तोत्र अहा, विधिपूर्वक हो प्रमुदित।।
भावों की कलियाँ, ये रोज खिलायें रे।।43।।

कुमुद रूप जो लोकनयन, उन्हें चन्द्र सम हो भगवन्!



स्वर व्यंजन की आभा से, स्तुति रचते जो भविजन।।
स्वर्ग संपदा वरते हैं, अष्ट कर्ममल हरते हैं।
मुक्ति महल में पग अपना, अहा! शीघ्र ही धरते हैं।।
अविनाशी सुख के, स्वामी कहलायें रे।।44।।

नमन-नमन प्रभु पार्श्व! नमन, कुमुदचन्द्र आचार्य नमन।।
स्तुति के शुभ भावों से, किया पद्य अनुवाद सृजन।।
गणाचार्य पद पर आसीन, गुरु ''विराग'' अध्यात्म प्रवीण।
गुरु के शुभ आशीषों से, किया ''विमर्श'' किन्तु मतिहीन।।
मंगल भावों से, हम भक्ति गायें रे।

।। इति श्री कल्याणमंदिर स्तोत्र पद्यानुवाद ।।

## कायोत्सर्ग विधि

श्वॉस लेते समय ''णमो अरहंताणं'' पद और श्वॉस छोड़ते समय ''णमो सिद्धाणं'' पद, फिर श्वॉस लेते समय ''णमो आइरियाणं'' और श्वॉस छोड़ते समय ''णमो उवज्झायाणं'' पद बोलें। पुनः श्वॉस लेते समय पंचम पद के अर्धभाग को अर्थात् ''णमो लोए'' और श्वॉस छोड़ते समय 'सव्वसाहूणं' पद बोलें। इसप्रकार एक बार पंच नमस्कार मंत्र के उच्चारण में तीन श्वॉसोच्छ्वास और नौ बार णमोकार मंत्र के उच्चारण में 27 श्वॉसोच्छ्वास करना चाहिए।

# एकीभाव स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

लगता जो एकीभाव को ही प्राप्त हो रहे,
भव-भव में साथ चलके दुःख के बीज बो रहे।
हे नाथ! कर्मबंध की है यह विशेषता,
दुष्कर है जिन्हें दूर भी करना हे देवता।।

हे जिनरवि! हो जिसके हृदय आपकी भक्ति,
होती है क्षीण घोर कर्मबन्ध की शक्ति।
फिर दूसरा सन्ताप जय कहाँ अशक्य है,
भक्ति से उसको जीतना होता अवश्य है।।1।।

जिनदेव! तत्त्वज्ञान के जो ज्ञाता ऋषि महा,
उनने सदा ज्योति-स्वरूप आपको कहा।
हो चूँकि पापतम विनाश में तुम्हीं कारण,
ज्योतिस्वरूप कहते नहीं तुमको अकारण।।

प्रभु! आप मेरे चित्त निकेतन में बस रहे,
होकर प्रकाशमान नित्य ही विलस रहे।



हे नाथ! पापतम निवास कैसे पायेगा?
कितना भी हो समर्थ पास वो न आयेगा।।2।।

जिसका भी आप में प्रभु! थिर चित्त हो रहा,
मुख जिसका हर्ष आँसू से अभिषिक्त हो रहा।
स्तोत्ररूपी मंत्र का लेकर जो आसरा,
करता है पूजा आपकी नित भाव से भरा।।

चिरकाल से भी जिनका फिर निवास हो प्रभो!
क्षण भर भी नहीं शान्ति सदा त्रास हो विभो!
तन रूपी बामी से निकलते रोग साँप भी,
प्रभु! आपकी भक्ति से कहाँ रहते पाप भी।।3।।

हे देव! पुण्योदय हुआ जब भव्यजनों का,
सुरलोक से तब आगमन हुआ जो आपका।
छह माह पूर्व जन्म की आई विशेषता,
सम्पूर्ण धरा पा गई कंचन सुरूपता।।

हे नाथ! ध्यान द्वार से तुमको बुला रहा,
भक्ति से अपने मन में तुम्हें ही बसा रहा।
तो नाथ! इसमें आश्चर्य की है बात क्या?
हो आगमन से आपके तन भी सुवर्ण सा।।4।।

प्रभु! लोक में हो अद्वितीय बन्धु अकारण,
करते हो हित सभी का अहित करते निवारण।
जग के सकल पदार्थ ज्ञान में झलक रहे,
सर्वज्ञ शक्ति को न कोई कर्म ढक रहे।।

चिरकाल से फिर भक्ति का विस्तार किया है,
मन रूपी शैय्या पर तेरा अवतार किया है।
मुझसे हुये पैदा दुःखों को कैसे सहोगे,
विश्वास मुझे पूरा, उन्हें दूर करोगे।।5।।

संसार वन में बहुत काल घूमता रहा,
हे नाथ! पुण्ययोग से फिर आपको लहा।
पाकर के नयकथा की ये अमृत सी बावड़ी,
इस रूप कर रहा हूँ प्रवृत्ति घड़ी-घड़ी।।

शशि के समान और बर्फ के समान है,
इस बावड़ी के नीर का अतिशय महान है।
इसमें जो मनुज डूब के स्नान करेगा,
दुःख दावानल का क्यों नहीं अवसान करेगा।।6।।

हे नाथ! तीन लोक किये आपने पावन,
आकाश मध्य जब भी हुआ आपका गमन।



कमलों पे आप रखते हो जब भी चरण कमल,
स्वर्णिम सुगन्ध श्री निवास हों तुरत कमल।।

फिर नाथ! आप जब मेरे हृदय में बस रहे,
हर अंग-अंग से मेरा हृदय परस रहे।
है कौन सा कल्याण जो न प्राप्त करूँगा,
है कौन अकल्याण जिसे मैं न हरूँगा।।7।।

रुकता नहीं किसी से भी जो दुर्निवार है,
उस काम मद को जीता तुम्हें नमस्कार है।
करते जो दर्श आपका निज भक्ति पात्र से,
पीते हैं वचन अमृत, होने सुपात्र वे।।

फिर कर्मरूपी वन से निकलकर के नाथ! वे
हों मुक्ति सदन में प्रविष्ट सुख के साथ वे।
आधार जिस पुरुष को आपके प्रसाद का,
क्रूराकृति सम रोग शूल से विषाद क्या।।8।।

हे नाथ! मानस्तम्भ जो पत्थर का है बना,
है अन्य भी पाषाण के स्तम्भ के समा।
होता है रत्नमय भी तो क्या बात निराली,
है अन्य-अन्य रत्नों में आभा वही लाली।।

फिर करते जो मनुष्य दर्श मानस्तम्भ का,
होता है दूर कैसे रोग उनके दम्भ का।
हे नाथ! दर्श शक्ति में श्रद्धा विधान है,
प्रभु! आपकी समीपता कारण महान है।।9।।

प्रभु! आपके शरीर रूपी गिरि समीप से,
बहती मनोहारी हवा जिसके करीब से।
उस नर के अपरिमित भी रोग रूपी धूल के,
सम्बन्ध को करती है दूर नाथ! मूल से।।

फिर जिसने बुलाया हृदय कमल पे ध्यान से,
हे नाथ! बिठाया तुम्हें भक्ति विधान से।
हित होता अलौकिक तो क्या लौकिक नहीं होगा,
कल्याण का उसको सहज सुयोग बनेगा।।10।।

भव-भव में मुझे जैसा जो दुःख प्राप्त हुआ है,
स्मरण मात्र से लगे शस्त्रों ने छुआ है।
प्रभु! आप हैं सर्वज्ञ व्यथा मेरी जानते,
सर्वेश! दयावान सभी तुमको मानते।।

आया हूँ भक्ति से भरा शरण में आपकी,
हो जाये शांति मेरे भी दुष्कर्म पाप की।



मेरे लिये तो नाथ! आप ही प्रमाण हैं,
जो चाहें जैसा चाहें आप मेरे प्राण हैं।।11।।

जो श्वान पापाचार में ही लीन रहा था,
जीवक से मृत्युबेला में उपदेश सुना था।
सुनकर के नमस्कार मंत्र देह को त्यागा,
पाया था देव सौख्य जन्म होते जो जागा।।

हे नाथ! फिर जो आपका गुणगान करेगा,
मणिमाला लेके नाम, जाप, ध्यान करेगा।
ऐसे पुरुष को इन्द्र की प्रभुता भी मिले तो
सन्देह की क्या बात ? विभूति भी फले तो।।12।।

जो शुद्धज्ञान शुद्धचरित धार रहे हैं,
जो मोक्ष की अभिलाषा को स्वीकार रहे हैं।
अविनाशी सुख प्रदाता जो अनुभूति रूप है,
हे नाथ! भक्ति आपकी कुञ्जी स्वरूप है।।

निष्कांक्ष भक्ति कुंजी यदि न हो पास में,
फिर मोक्षद्वार कैसे खुले निज विकास में।
जिस द्वार पे मजबूत मोह ताला लगा हो,
कुंजी बिना कैसे खुलेगा ताला, बताओ।।13।।

हे देव! मुक्तिमार्ग यद्यपि महान है,
निश्चय से, किन्तु पाप तिमिर का वितान है।
दुःख रूप गहन गर्त ऊँच-नीच थान हो,
उस मार्ग पे चलते हुए मुश्किल में जान हो।।

जीवादि तत्त्वज्ञान को प्रकाशने वाला,
हे नाथ! दिव्यध्वनि रूपी दीप निराला।
शिवपथ पे यदि आगे-आगे साथ न रहे,
तो कौन पुरुष पथ पे गमन सुख से कर सके।।14।।

है जो असीम आत्मज्ञानरूपी खजाना,
जो दृष्टा को आनंद का कारण है बखाना।
वह कर्मरूप पृथ्वी के पटल से ढका है,
वह अन्य जनों के लिये दुर्लभ ही कहा है।।

प्रकृति-प्रदेश-स्थिति-अनुभाग बन्ध की,
पृथ्वी को खोदने के लिये है जो कुदाली।
हे नाथ! वह है आपकी भक्ति व स्तुति,
जो भव्य करेगा वो शीघ्र पायेगा मुक्ति।।15।।

नय रूप हिमालय से जो उत्पन्न हुई है,
जो मोक्ष-समुन्दर में जा सम्पन्न हुई है।



वह भक्तिगंगा नाथ! जो हृदय में बस रही,
वह आप चरणकमल के कारण विलस रही।।

श्रद्धा के वशीभूत हो स्नान किया है,
कल्मष जो धुल गया विशुद्ध मन ये हुआ है।
हे देव! न सन्देह का स्थान रहा है,
भक्ति में जब से मन ये मेरा मग्न हुआ है।।16।।

अविनाशी सौख्य हो गया जिनके लिये प्रगट,
हे देव! सतत् ध्यान में हूँ आपके निकट।
मैं हूँ वही, जो आप हैं ऐसी हुई मति,
होकर मैं निर्विकल्प करूँ निश्चय स्तुति।।

यद्यपि ये बुद्धि झूठ है एकांत नहीं है,
तो भी अचल सुतृप्ति को विश्रान्ति यहीं है।
प्रभु! आपके प्रसाद से सदोष आत्मा,
इच्छित फलों को पा, बनें निर्दोष आत्मा।।17।।

प्रभु! आपका दिव्यध्वनि रूपी ये समुन्दर,
उठती है जिसमें सप्तभंग समकिती लहर।
जो मिथ्यावाद रूपी महामल हटा रहा,
सम्पूर्ण जगत जिसमें सुरक्षा को पा रहा।।

मनरूपी सुमेरु को बनाकर के मथानी,
दिव्यध्वनि रूपी समुद्र मथते सुज्ञानी।
निज ज्ञानरूपी अमृत का पान कर रहे,
संतुष्ट हो चिरकाल वे अज्ञान हर रहे।।18।।

होता स्वभाव से जो असुन्दर कुरूप सा,
आभूषणों से चाहता वो ही सुरूपता।
शत्रु के द्वारा जिसको जीतना भी शक्य है,
वो है कुदेव शस्त्र भी रखता अवश्य है।।

हे देव! सहज आप हो सर्वांग से सुन्दर,
शत्रु के लिये आप ही अजेय हो भूपर।
तन पे न रखते आप कभी फूल या भूषण,
फिर वस्त्र अस्त्र-शस्त्र से भी क्या है प्रयोजन।।19।।

इन्द्रादि करते सेवा भलीभाँति आपकी,
हे नाथ! प्रशंसा है क्या उससे भी आपकी।
प्रभु! आपकी कृपा से इन्द्र भव को नाशता,
उससे तो उसी इन्द्र की होती श्लाघ्यता।।

हे नाथ! आप भवसमुद्र तारने वाले,
मुक्तिवधु के स्वामी सिद्धि धारने वाले।



तिहुँलोक अनुग्रह-निग्रह में समर्थ हो,
प्रभु! आपकी स्तुति ये प्रशंसा के अर्थ हो।।20।।

प्रभु! आपके अनुपम वचन पर के समान न,
प्रभु! आप कभी पर पदार्थ के समान न।
इस हेतु से स्तुति वचन की कैसी संगति,
स्पष्ट दिखती मिथ्यावचन की विसंगति।।

स्तुति वचन विसंगति फिर भी विशिष्ट है,
भक्ति पीयूष से सदा ही क्योंकि पुष्ट है।
स्तुति वचन ही जीवों का संसार खोते हैं,
इच्छित फलों को देने कल्पवृक्ष होते हैं।।21।।

हे देव! आप क्रोध-भाव धारते नहीं,
प्रभु! आप प्रीतिभाव को उचारते नहीं।
निरपेक्ष चित्त आपका निश्चय महान है,
अत्यन्त उपेक्षा से व्याप्त पूर्णज्ञान है।।

तो भी ये जगत् आपकी आज्ञा अधीन है,
करने को दूर शत्रुता सन्निधि सुचीन है।
हे जगतिलक! प्रभुत्व ऐसा अन्य कहाँ है,
होगा अगर तो आपका सानिध्य वहाँ है।।22।।

हे देव! स्वर्ग अप्सरायें गातीं कीर्ति,
सर्वज्ञ देव! आप पूर्णज्ञान-मूर्ति।
जो भव्य पुरुष आपकी भक्ति में हो अटल
उसका कभी शिवमार्ग भी होता नहीं कुटिल।।

सिद्धांत-तत्त्व ग्रंथ का होता है पारखी,
हिरदय में उस पुरुष के प्रगट होती भारती।
आती कभी न मूर्च्छा सिद्धान्त ग्रंथ में,
करता जो शीघ्र स्तुति इस मोक्षपंथ में।।23।।

हे देव! आप हो अनंत-सौख्य के स्वामी,
हे देव! आप हो अनंत-वीर्य के स्वामी।
हे देव! आप हो अनंत-ज्ञान के स्वामी,
हे देव! आप हो अनंत-दर्श के स्वामी।।

जो भव्य नियतकाल मन से आपको ध्याता,
आदर के साथ स्तुति गुण आपके गाता।
निश्चय से पुण्यवान वो शिवमार्ग को पाता,
तीर्थेश जैसे पञ्चकल्याणक को मनाता।।24।।

देवेन्द्र भक्ति-भाव से अभिभूत हुए हैं,
जिनचरण पूजने को नम्रीभूत हुए हैं।



हैं सूक्ष्मज्ञान चक्षु ऐसे योगीराज भी,
सक्षम न प्रभु! आपके गुणगान में कभी।।

हा! मूर्ख हम जो स्तुति उपहार कर रहे,
छल से अहो! सम्मान का विस्तार कर रहे।
निश्चय यही सम्मान तो शिव कल्पवृक्ष है,
हम चाहते निज सौख्य जो होता प्रत्यक्ष है।।25।।

जो व्याकरण ज्ञाता वो हीन वादिराज से,
जो श्रेष्ठ नैयायिक वो हीन वादिराज से।
जो हैं प्रसिद्ध कवि वो हीन वादिराज से,
जो साधु पुरुष हैं वो हीन वादिराज से।।26।।

स्तोत्र एकीभाव का अनुवाद किया है।
गुण अर्चना 'विमर्श' प्रभु को याद किया है।।
निज शुद्ध भावना से भवि जो पाठ करेगा।
वो शीघ्र अपने अष्टकर्म नाश करेगा।।27।।

एकीभाव स्तोत्र का, करता जो नित पाठ।
वो ''विमर्श'' बनता सहज, मोक्षमहल सम्राट।।

।। इति श्री एकीभाव स्तोत्र पद्यानुवाद ।।

# विषापहार स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

स्वात्मा में स्थित हो किन्तु कहाते आप सर्वव्यापक,
जानकर सर्वद्रव्य व्यापार आप कहलाते ग्रन्थ रहित।
शुद्ध चैतन्य प्राण से दीर्घ किन्तु हो आप जरा से हीन,
करो पापों से रक्षा नाथ! आप हो श्रेष्ठ पुरुष प्राचीन।।1।।

अन्यजन से अचिन्त्य, युगभार अकेले किया आप धारण,
योगिजन कर न सके स्तुति करूँगा मैं क्या साधारण।
नहीं कर सकता स्तुति पूर्ण किन्तु फिर भी करता लवलेश,
सूर्य का नहीं प्रवेश जहाँ क्या दीपक करता नहीं प्रवेश।।2।।

आपकी स्तुति करने का इन्द्र ने छोड़ दिया अभिमान,
किन्तु मैं नहीं छोड़ सकता आपकी स्तुति हे भगवान्!
भवन के बीच झरोखे सा है यद्यपि मुझको मति-श्रुतज्ञान,
करूँगा फिर भी अधिकाधिक आपकी गुण स्तुति बखान।।3।।

विश्वदृष्टा हो भगवन्! आप, आप सर्वज्ञ कहाते हो,
आपको नहीं जानता कोई, किसी को नजर न आते हो।
आप प्रभु! कितने-कैसे हो? जगत कहने में है असमर्थ,
इसलिये पूर्ण स्तुति की नहीं मुझमें भी प्रभु! सामर्थ्य।।4।।



हुये बालकवत् जो निजदोष हो रहे हैं पीड़ित अत्यन्त,
निरोगी करके जग जन को किया उपकार महा भगवन्त।
हिताहित के विचार में मूढ़ सर्व प्राणी जो दुःख को प्राप्त,
मिटाते आप मूढ़ता रोग कहाते बालवैद्य हे आप्त!।।5।।

सूर्य न दाता-हर्ता किन्तु दिखाता नितप्रति झूठी आश,
सदा कुछ देने को असमर्थ बिताता दिवस कपट का दास।
आप अच्युत-स्वभाव-धारी चरण में जो नर नम्रीभूत,
तुरत देते हो इच्छित वस्तु भक्त हो जाते हैं अभिभूत।।6।।

आपके सन्मुख रहता जो भक्तिवश वो सुख को पाता,
विमुख रहनेवाला प्राणी, अरे दुःख ही दुःख को लाता।
किन्तु हे नाथ! आप दोनों पुरुष को रहते एक समान,
स्वच्छ दर्पण सम कान्ति युक्त हमेशा होते शोभावान।।7।।

हुआ करता सागर जिस थान वहाँ सागर की गहराई,
सुमेरु गिरि होता जिस थान वहाँ मेरु की ऊँचाई।
जहाँ आकाश और पृथ्वी वहाँ उनकी विशालता है,
आपमें समा रहे त्रय गुण और तिहुँलोक व्यापता है।।8।।

आपका प्रभु! परमार्थस्वभाव यद्यपि है परिवर्तनशील,
मोक्ष से वापिस आने का किन्तु उपदेश नहीं दुश्शील।

आप इन्द्रिय सुख को तजकर अतीन्द्रिय सुख की करते चाह,
जगत को लगे वृत्ति विपरीत किन्तु दिखलाते सच्ची राह।।9।।

किया है कामदेव को भस्म आपने ही जिनवर भगवान,
काम में हुआ कलंकित शम्भु न पाया वीतराग विज्ञान।
हुए विष्णु वृन्दा में लीन काम से मानी उनने हार,
आप थे जाग्रत जिससे नाथ! पास न आया काम विकार।।10।।

और यह देव पाप से युक्त और वह देव पाप से हीन,
दोष इनके कहने से आप गुणी नहिं होते हे स्वाधीन!
अगर सागर है महिमावान तो अपने निज स्वभाव से ही,
सरोवर को छोटा कहने से महिमा होती कभी नहीं।।11।।

जीव ले जाता है बहुथान कर्म की स्थिति को बहुबार,
कर्मथिति ले जाती बहुथान जीव को अरे अनेकों बार।
परस्पर जीव-कर्मथिति का नाव-नाविक जैसा नेतृत्व,
भवोदधि में, प्रभु! गाया आप, यद्यपि होता पूर्ण पृथक्त्व।।12।।

आपके समीचीन पथ से चला करते हैं जो विपरीत,
चाहते हैं सुख को लेकिन दुःखों को आचरते बन मीत।
गुणों के हेतु दोष को और धर्म के हेतु पाप ध्याते,
तेल के लिये पेलते बालु अरे! ज्यों बालक हर्षाते।।13।।



दूर करने प्रभाव विष का अहो! सब ही संसारी जन,
औषधि, मंत्र, रसायन, मणि हेतु करते नित परिभ्रमण।
किन्तु हे नाथ! आप ही मणि, औषधि, मंत्र, रसायन हैं,
सभी पर्याय नाम तेरे अरे! क्यों नहीं स्मरण हैं।।14।।

हृदय में करते न कुछ आप किन्तु कहलाते हो जगनाथ,
बिठाता हृदय आपको जो किया सम्पूर्ण जगत् निज हाथ।
चित्त से बाह्य हुये फिर भी सुखों से जीवित हैं हे नाथ!
अहा! सम्पूर्ण जगत को एक यही है आश्चर्य की बात।।15।।

आप त्रयलोकों के स्वामी जानते तत्त्व अरे! त्रय काल,
पदारथ नियत अतः संख्या ठीक कह सकते हे प्रतिपाल!
ज्ञान साम्राज्य के प्रति ठीक न हो सकती संख्या हे नाथ!
व्याप्त कर लेता ज्ञान इन्हें और भी यदि पदार्थ हों साथ।।16।।

आप हो अगमस्वरूपी नाथ! इन्द्र करता सेवा रमणीय,
नहीं उपकार आपका किन्तु करे कितनी सेवा कमनीय।
मिले ज्यों निज को छाया, छत्र सूर्य सन्मुख करके धारण,
आपकी भक्ति इन्द्र के ही आत्मसुख का होती कारण।।17।।

कहाँ प्रभु! राग-द्वेष से हीन, कहाँ भविजन को सुख उपदेश ?
बिना इच्छा के कैसे नाथ, अरे! हो सकता धर्मोपदेश।

यदि इच्छा के हो प्रतिकूल, तो सब जीवों को प्रिय कैसे ?
इसलिए पूर्ण रूप का कथन नहीं कर सकते हम जैसे।।18।।

अहो! जल शून्य उच्च पर्वत नदी के बन जाते आधार,
किन्तु पर्वत सम उच्च समुद्र नहीं बनते सरिता का द्वार।
आप इतने उदार स्वामी! भक्तजन सब कुछ पा जाते,
कृपण सागर सम धनपति से न जिसकी इच्छा कर पाते।।19।।

अरे सौधर्म इन्द्र ने ही विनय से किया दण्ड धारण,
करूँगा त्रिभुवन की सेवा नियम है एकमात्र कारण।
अतः प्रतिहार्य इन्द्र को है आपको हुआ कहाँ हे नाथ!
यदि प्रतिहार्य आपको है एक उपचार भाव के साथ।।20।।

देखते आदर से धनहीन कहाते जग में जो श्रीमान्,
किन्तु आदर से निर्धन को न देखें आप सिवा श्रीमान्।
देखते तम - स्थित जैसे उजेले में स्थित जन को,
देखता न प्रकाश स्थित मनुज वैसे तमथित जन को।।21।।

जो अपनी वृद्धि श्वासोच्छ्वास और प्रत्यक्ष नेत्र टिमकार,
आत्म अनुभव करने में हैं लोकजन जो भी मूढ़ विचार।
मनुज वह, सकल ज्ञेय का जो है ज्ञाता केवलज्ञान स्वरूप,
जान सकता है कैसे ? नाथ! अरे अज्ञानी आत्मस्वरूप।।22।।



आपकी स्तुति करने नाथ! किया करते जो जन कुलगान,
पुत्र हो नाभिराय के और पिता भरतेश के आप महान।
हुआ पत्थर से पैदा स्वर्ण हाथ पाकर जो तजते हैं,
अहो! अज्ञानीजन प्रभु आप आत्मगुण को नहिं भजते हैं।।23।।

सुरासुर को करके अभिभूत किया जन-जन को भी मदहोश,
मोह ने अपने अतिशय का बजाया त्रिभुवन में उद्घोष।
आपके बल के आगे नाथ! मोह के बल का हुआ निरोध,
ठीक ही है समूल हो नाश, करे बलशाली का जो विरोध।।24।।

आपने देखा है हे नाथ! एक मुक्ति का ही मारग,
अन्य देवों ने चहुँगति का सघन वन देखा दुःखकारक।
'मैंने सब कुछ देखा' यह सोच किया न किन्तु अरे अभिमान,
गर्व से देखी न निज बाहु मुझे ऐसा लगता भगवान्।।25।।

राहू सूरज का करता लोप और जल करता अग्नि विनाश,
प्रलय की वायु सागर का विरह संसार भोग का नाश।
आप से जो भी भिन्न पदार्थ नाश के साथ उदय को प्राप्त,
किन्तु तुम अव्याबाध अनंत सदा अविनाशी हो हे आप्त।।26।।

आपको जाने बिन कोई नमन कर जो फल पाता है,
जानकर अन्य देव को किन्तु कभी न वह फल पाता है।

नीलमणि को धारण करता पुरुष जो काँच बुद्धि के साथ,
करे मणि धारण जो , मणि जान, नहीं उससे दरिद्र हे नाथ।।27।।

चतुर जन सुन्दर मधुर वचन बोलकर महिमा करें अपार,
कषायों से जलते जन में, देवता का करते व्यवहार।
बुझे दीपक का ज्यों बढ़ना बताते सो निश्चय से लोग,
और फूटे घट का मंगल दिखाते ज्यों कर वचन प्रयोग।।28।।

अहो! प्रभु वचन अनेक स्वरूप प्रयोजन एक बताते हैं,
वचन हितकर सुन भवि तुमको सदा निर्दोष ही पाते हैं।
कि जैसे कोई ज्वर रोगी अरे जब होता ज्वर से मुक्त,
सभी स्वर हो जाते निर्दोष कहाता मधुर कण्ठ से युक्त।।29।।

आपकी इच्छा बिन हे नाथ! वचन स्वाभाविक खिरते हैं,
अहो! कोई नियोग ऐसे किसी शुभकाल में रहते हैं।
क्योंकि निश्चय से मैं सागर पूर्ण कर दूँ अब इस कारण,
चन्द्रमा उदित नहीं होता, उदित होता स्वभाव कारण।।30।।

आपके गुण गंभीर परम, हैं उज्ज्वल बहुत अनेक प्रकार,
आप में दिखता उनका अन्त अन्य देवों ने मानी हार।
आपकी स्तुति में उनका किन्तु दिखता न कोई अंत,
गुणों का इससे बढ़कर और अन्य क्या गुण है कहते संत।।31।।



मात्र स्तुति के द्वारा ही न इच्छित वस्तु होती सिद्ध,
परम भक्ति - स्मृति से और नमस्कृति से भी कहें प्रबुद्ध।
इसलिये करता हूँ नित भक्ति स्मरण और प्रणाम त्रिकाल,
हो किसी भी उपाय से सिद्ध चाहिये इच्छित फल तत्काल।।32।।

अतः हे तीन लोकरूपी नगर के अधिपति! अविनाशी!
हे सहज! हे अनंतशक्ति! हे परमज्ञानज्योति भासी!
स्वयं हो पुण्य-पाप से हीन, भव्य को सुकृत के साधन,
अवंद्यक होकर भी जगवंद्य आपको करता नित्य नमन।।33।।

रूप-रस-गंध-शब्द-स्पर्श रहित होकर के भी प्रभु! आप,
जानते सब विषयों के भेद धन्य यह केवलज्ञान प्रताप।
आप होकर के प्रभु! सर्वज्ञ, नहीं जाने जाते पर से,
आपका प्रभु गंभीर स्वभाव नहीं मानस के चिन्तन योग्य,
अकिंचन आप किन्तु धनपति प्रार्थना करते निज-निज योग्य।
आपने देखा है जग पार, आपका पार नहीं दिखता,
जगत्पति मैं शरणा को प्राप्त, जगत् श्री चरणों में झुकता।।35।।

तीन लोकों के जीवों के आप हो दीक्षा गुरु महान,
नमन करता हूँ बारम्बार आपके श्री चरणों श्रीमान्।
आत्मगुण से वर्धित होकर हुए उन्नत स्वभाव से आप,
नहीं पत्थर फिर गिरि जैसा, कुलाचल मेरु अपने आप।।36।।

आप हो स्वयं प्रकाशी नाथ! नहीं दिन और रात जैसे,
अतः दिन और रात की तरह बाध्य-बाधकपन हो कैसे?
सदा लाघव-गौरव से हीन कहाते एक रूप भगवान्,
समय की मर्यादा से मुक्त वन्दना करता विभो! महान।।37।।

इस विधि स्तुति कर हे देव! दीन हो माँगू न वरदान,
आप हो रागद्वेष से हीन, उपेक्षक कहलाते श्रीमान्।
वृक्ष छाया आश्रितजन को सहज ही होती है जब प्राप्त,
याचना छाया की करके कौन सा लाभ अरे, हे आप्त।।38।।

प्रभो! कुछ देने की यदि चाह, यदि आग्रह माँगो वरदान,
आप में लीन रहूँ ऐसी भक्ति बुद्धि दो हे भगवान्!
आपकी मुझ पर वैसी ही कृपा होगी अवश्य स्वामी,
कौन गुरु करे नहीं पोषण शिष्य का जो गुरु अनुगामी।।39।।

आपकी यथाकथञ्चित् भक्ति विनत होकर करते जो लोग,
मिला करते उनको जिनदेव! सहज ही इच्छित फल के योग।
आपकी स्तुति भक्ति विशेष विनत होकर करता जो नाथ,
कीर्ति धन जय सुख होता प्राप्त संतति से मुक्ति का साथ।।40।।

विषापहार स्तोत्र का, करता जो नित पाठ।
विष विभाव का नाश कर, पाता निज गुण आठ।।
कवि धनञ्जय ने रचा, यह स्तोत्र महान।
कर 'विमर्श' पाऊँ प्रभो! मुक्ति का वरदान।।

।। इति श्री विषापाहार स्तोत्र पद्यानुवाद ।।



# श्री गणधरवलय स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

जीत लिये सब घाति अघाति, ऐसे श्री जिनेन्द्र भगवान्,
देशावधि, सर्वावधि, परमावधि धारी गुणश्रेष्ठ महान्।
कोष्ठ, बीज, पादानुसारि ऋद्धिधारी श्री गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।1।।

महाऋद्धि संभिन्नश्रोतृ के धारी सब भाषाविद् बुद्ध,
स्वयंबुद्ध, प्रत्येक-बुद्ध, उपदेश प्राप्त जो बोधित बुद्ध।
स्वामी सच्चे मुनियों के शिवमार्ग धर्म के गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।2।।

ऋजु-विपुलमति ज्ञान-मनःपर्यय द्वि-विध इनके धारी,
जो दस पूरब के धारी हैं चौदह पूरब के धारी।
महानिमित्त अष्टांग के ज्ञाता शास्त्रदक्ष जो गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।3।।

महाप्रभावक नाम विक्रिया ऋद्धि के जो हैं धारक,
महाप्रज्ञ, चारण ऋद्धि को प्राप्त, महाविद्या धारक।

सदा मध्य आकाश गमन करनेवाले श्री गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।4।।

आशीविष–दृष्टिविष ऋद्धि धारी हैं जो महाश्रमण,
दीप्तोत्तम–अति उग्र–तप्त तप–ऋद्धि करें जो मुनि धारण।
और महा अतिघोर परम तप धारक हैं जो गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।5।।

लोक पूज्य, देवों से वंदित, घोर गुणों के जो धारक,
जो बुधजन से पूज्य लोक में घोर पराक्रम के धारक।
सम्यक् श्रेष्ठ अघोर ब्रह्म–गुण–धारी जितने गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।6।।

आमर्द्धि, खेलर्द्धि, विडर्द्धि परम जल्ल ऋद्धिधारी,
सर्वऋद्धि को प्राप्त महामुनि पीड़ाहर अति उपकारी।
काय–वचन–मनबल ऋद्धि से युक्त सभी श्री गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।7।।

जो अक्षीण महानस – वर संवास ऋद्धि क्षीरस्रावी,
समीचीन सर्पिस्रावी, मधुरस्रावी, अमृतस्रावी।



अहा! सुशोभित तीन लोक में पूज्य यति श्री गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।8।।

सिद्धालय में राजित जो श्री अतिमहान अतिवीर अहा,
वर्द्धमान ऋद्धि, विशिष्ट बुद्धि ऋद्धि में कुशल महा।
मुक्ति लक्ष्मी वरण करें सब मुनि ऋषिगण या गणधर देव,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु करता स्तुति चरणों की सेव।।9।।

सेवित मनुज देव खचरों से, गुण समुद्र, वर ऋद्धिवान्,
कामदेव रूपी हाथी को वश में करने सिंह समान।
जो संसार समुद्र पार करने हैं उत्तम पोत समान,
वन्दित मुनिगण इन्द्र श्री गणधर, मुझे सिद्धपद करें प्रदान।।10।।

गणधर वलय मन्त्र को पढ़ता जो प्रतिदिन विशुद्ध मन से,
आस्रव होता पुण्यकर्म का पाप कर्म निर्जर उनके।
भूत–पिशाच, रोग विष व्याधि दूर सभी होती बाधा,
दिखते स्वप्न शुभाशुभ मृत्यु–समय समाधि मरण पाता।।11।।

हो 'विमर्श' सबके हृदय, कर्मों का हो नाश।
चिदानंद रसपान कर, पाऊँ आत्म निवास।।

(इति श्री गणधरवलय स्तोत्र)

# श्री परमानंद स्तोत्र

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

परमानंद महास्तोत्र, मोक्ष दिखाये रे
शुद्धात्मा की, हो-हो-2 अनुभूति कराये रे
परमानंद महास्तोत्र....

जो परमानंद युक्त कहा, जो विकार से रहित अहा।
आधि-व्याधि सब रोगों से, रहित निरामय अतः सदा।।
निज तन स्थित शोभित है, परमातम मन मोहित है।
ध्यानहीन न देख सके, अतः नहीं सम्मोहित है।।
ज्ञानी निजप्रभु का, हो-हो-2 अनुभव कर पाये रे।।1।।

जो अनन्तसुख से परिपूर्ण, जो अनन्तबल से परिपूर्ण।
जो सागरसम ज्ञानमयी, अमृतजल से है सम्पूर्ण।।
ऐसा ही परमात्म स्वरूप, ऐसा ही निज आत्मस्वरूप।
अवलोकन जो करता है, बन जाता है अमल अनूप।।
योगी ही निज का, हो-हो-2 अनुभव कर पाये रे।।2।।

जो रागादि विकार रहित, निराबाध निज गुण शोभित।
अन्तरंग-बहिरंग सभी, परिग्रह से भी जो विरहित।।
केवलज्ञान स्वरूप कहा, केवलदर्शन रूप कहा।



परमानन्दमयी चेतन, केवल अनुभव रूप कहा।।
परमात्मा का, हो-हो-2 लक्षण कहलाये रे।।3।।

उत्तम है स्वातम चिन्ता, मध्यम कही मोह चिन्ता।
होती अधम कामचिन्ता, अधमाधम है परचिंता।।
जो तीनों चिंता तजकर, एक स्वात्मा ही भजकर।
भेदज्ञान प्रगटाता है, करता है पुरुषार्थ प्रखर।।
निश्चय समाधि, हो-हो-2 वो ही धर पाये रे।।4।।

निर्विकल्पता से उत्पन्न, आत्मज्ञान से हो सम्पन्न।।
ज्ञानामृत रस झरता है, सर्वप्रदेशों से निष्पन्न।।
विवेकांजुलि पाकर के, भेदज्ञान प्रगटाकर के।
ज्ञानामृत रस पीते हैं, योगीजन समता धरके।।
निज रस बिन इनको, हो-हो-2 कुछ और न भाये रे।।5।।

नित्यानन्दस्वरूप अहा, आतम अरस-अरूप कहा।
भव्य पुरुष जो जान रहा, सच्चा पण्डित वही कहा।।
वह योगीपद को धरता, शुद्ध आत्मा को वरता।
जो परमानन्द का कारण, निज शुद्धातम अनुभवता।।
मुक्तानुभूति, हो-हो-2 निज-मुक्ति कहाये रे।।6।।

जैसे सुन्दर नलिनीदल, ऊपर स्थित बिन्दु जल।
भिन्न-भिन्न रहते दोनों, नलिनीदल वा बिन्दु जल।।
वैसे ही तन में रहता, निर्मल आतम स्वभावता।

स्वाभाविक निजभावों से, तन से भिन्न रहा करता।।
चेतन-तन यारी, हो-हो-2 न्यारी कहलाये रे।।7।।

ज्ञानावरणादिक जानो, द्रव्यकर्म मल है मानो।
भावकर्म रागादिक जो, कारण-कार्य इन्हैं जानो।।
देहादिक नोकर्म कहा, चेतन सबसे रहित अहा।
निश्चय से ऐसा जानो, सर्वज्ञों ने यही कहा।।
सर्वज्ञ बिन क्या, हो-हो-2 निर्णय हो पाये रे।।8।।

जिस प्रकार जन्मान्ध अरे, सूर्य दर्श की चाह करे।
किन्तु दर्श न पाता है, चाहे जितना यत्न करे।।
वैसे निज तन में राजित, नित्यानन्द स्वरूप सहित।
परम ब्रह्म परमातम जो, ध्यान चक्षु से है दर्शित।।
ध्यानान्ध कैसे, हो-हो-2 दर्शन कर पाये रे।।9।।

सम्यक् ध्यान वही होता, मन चंचलता को खोता।
लीन हुआ परमानन्द में, खूब लगाता है गोता।।
भव्यजीव वह ध्यान करें, तत्क्षण ही अज्ञान हरें।
चमत्कार चित् दर्शन कर, शुद्धातम का ज्ञान करें।।
ध्यानी निज प्रभु का, हो-हो-2 दर्शन कर पाये रे।।10।।

शुद्धातम नित ध्याते जो, श्रेष्ठ मुनि कहलाते जो।
भव-भव से आगत दुःख को, निश्चय शीघ्र नशाते वो।।



परमातम पद को पाते, पूर्णज्ञान में रम जाते।
अहो! मात्र क्षणभर में ही, महा मोक्षपद अपनाते।।
शुद्धात्म ध्यानी, हो-हो-2 सिद्धालय पाये रे।।11।।

जो निज ध्यान प्रवीण हुए, जो स्वातमरस भीन हुए।
तज संकल्प-विकल्प सभी, निज स्वभाव में लीन हुए।।
वे मुनि नित्यानन्द स्वरूप, परमातम जो अमल अनूप।
करते अचल निवास सदा, जो योगी जाने इस रूप।।
स्वयमेव वह भी, हो-हो-2 परमातम पाये रे।।12।।

अहा! वही परमात्म स्वरूप, चिदानन्दमय अविकल रूप।
रागादिक मल हीन अतः, कहलाता है शुद्ध स्वरूप।।
निराकार नीरोग अहा, सुख अनंत परियोग कहा।
अन्तरंग-बहिरंग सभी, परिग्रहों से शून्य कहा।।
योगी ही निज में, हो-हो-2 रमकर सुख पाये रे।।13।।

निश्चय नय से आतम जान, लोकाकाश प्रदेश प्रमाण।
वह व्यवहार अपेक्षा से, छोटे-बड़े शरीर प्रमाण।।
इसमें न कोई संशय, इसमें न कोई विस्मय।
परमेश्वर ने यही कहा, मान रहा ज्ञानी निर्भय।।
आतम का निर्णय, हो-हो-2 ज्ञानी कर पाये रे।।14।।

निर्विकल्प समता धरके, चित्त पूर्ण स्थिर करके।
अहा! शुद्ध परमात्मस्वरूप, निज में स्थित होकर के।।

जो योगी जिस क्षण लखता, विभ्रम उस क्षण ही मिटता।
रहता न अज्ञान जरा, पूर्ण स्वभाव सहज रहता।।
स्थिर चित् योगी, हो-हो-2 अज्ञान नशाये रे।।15।।

वही परमध्यानी योगी, परम ब्रह्म निश्चय भोगी।
कर्म विजेता जिनपुंगव, कहलाता वह ही योगी।।
किया परम पुरुषार्थ अतः, परम तत्त्व है निश्चयतः।
गुरु भी जिसको ध्याते हैं, परमगुरु है वही अतः।।
यह परमातम का, हो-हो-2 निज-रूप कहाये रे।।16।।

लोकालोक प्रकाशी है, परमज्योति अविनाशी है।
कर्म निर्जरा का हेतु, अतः परम तप वासी है।।
शुक्लध्यान का ध्याता है, परम ध्यान कहलाता है।
निजस्वरूपमय होने से, वह परमात्म कहाता है।।
परमात्म अनुभव, हो-हो-2 निर्जरा कहाये रे।।17।।

सर्वजीव कल्याण सदा, अतः सर्व कल्याण कहा।
नित्य अतीन्द्रिय सुखमय है, अतः परम सुख पात्र कहा।।
ज्ञान चेतना रूप अतः वही शुद्धचिद्रूप कहा।
स्वपर मोक्षमय होने से, वही परम शिवरूप कहा।।
नाना गुण से ही, हो-हो-2 सब संज्ञा पाये रे।।18।।

पूर्ण निजाश्रित नित्य अहा, वह परमानंद युक्त कहा।
स्वयं सर्वसुखदायक है, अतः दुःखों से मुक्त कहा।।



कर्म-कर्मफल चेतन हीन, अतः परम चैतन्य प्रवीण।
वह अनन्त गुण का सागर, हो सकता कैसे गुणहीन।।
स्वाभाविक परिणति, हो-हो-2 इस रूप बनाये रे।।19।।

परम सौख्य सम्पन्न अहा, रागद्वेष से शून्य कहा।
ऐसा अर्हत् देव अहो! देह निकेतन में रहता।।
इस प्रकार जो जान रहा, ज्ञानी जो भी मान रहा।
वो ही सच्चा पंडित है, रहता न अज्ञान जरा।।
ज्ञायक की महिमा, हो-हो-2 ज्ञानी को आये रे।।20।।

संस्थान से रहित सदा, निराकार जो शुद्ध कहा।
निजस्वरूप में लीन अतः, निर्विकार अविरुद्ध अहा।।
कर्म कालिमा विघटाता, अतः निरंजन कहलाता।
आठ गुणों से अति शोभित, सिद्ध प्रभु को जो ध्याता।।
सिद्धों जैसा ही, हो-हो-2 इक दिन बन जाये रे।।21।।

मैं हूँ सहजानन्द स्वरूप, मैं हूँ नित चैतन्य स्वरूप।
जो निज आतम को जाने, इन गुणधारी सिद्ध स्वरूप।।
केवलज्ञान प्रकाश मिले, यही भावना नित्य फले।
सच्चा पंडित वही पुरुष, जिसके अन्तर दीप जले।।
सिद्धों को ध्याकर, हो-हो-2 निर्मल हो जाये रे।।22।।

जैसे कोई स्वर्ण पाषाण, उसमें सोना कहे जहान।
दूध मध्य घृत होता है, कहता जैसे हर इंसान।।

जैसे तिल होता सुन्दर, तेल रहे उसके अन्दर।
वैसे ही आनन्द स्वरूप, आतम है तन के अन्दर।।
जो ऐसा माने, हो-हो-2 वह भव्य कहाये रे।।23।।

जैसे काष्ठ कोई सुन्दर, आग शक्तितः है अन्दर।
वैसे ही इस तन में भी, रहता शुद्धातम अन्दर।।
जो ज्ञानी माने ऐसा, जो ज्ञानी जाने ऐसा।
वो ही सच्चा पंडित है, बन जाता प्रभु के जैसा।।
परमात्मा को, हो-हो-2 निज में ही पाये रे।।24।।

चाहूँ आत्मविभूति सदा, हो आतम अनुभूति सदा।
शुद्धभाव से शुभ आदि, भावों की आहूति सदा।।
किया अहा पद्यानुवाद, किया अहा निज प्रभु को याद।
सदा जिनागम पंथ मिले, है विमर्श है अंतर्नाद।।
परमानंद स्तुति, हो-हो-2 भविजन को आये रे।

।। इति श्री परमानंद स्तोत्र ।।



## श्री गणधर चालीसा

रचयिता-श्रमणाचार्य विमर्शसागर

वीतराग गणपति नमूँ, दीपावलि दिन आज।
ज्ञान ज्योति से मोह का, मिट जाये साम्राज।।
दीपावलि का शुभ दिवस, चालीसा जो ध्याय।
चारों गति से छूटकर, पंचम गति को पाय।।

जय जय जय श्री गणधर देवा, सुर नर उरग करें नित सेवा।
ऋद्धि-सिद्धि सब सुख के दाता, जगत आपकी महिमा गाता।
गण स्वामी गणपति कहलाते, गण के ईश गणेश कहाते।
नाथ! आप गणनाथ कहाते, गण धरते गणधर कहलाते।।
अष्ट ऋद्धियों के हो स्वामी, तीर्थंकर के हो अनुगामी।
अक्षर और अनक्षर भाषा, बहुजन मुख निर्गत बहुभाषा।।
श्रोतृ ऋद्धि से आप जानते, जन-जन भाषा में बखानते।
चारण गुण से गगन विचरते, अणिमा आदि आठ गुण धरते।।
ऋषभदेव गणधर चौरासी, अजितनाथ नब्बे सन्यासी।
शतक एक पच है संभव विभु, एक शतक त्रय अभिनंदन प्रभु।।
सुमतिनाथ पंचम तीर्थंकर, एक शतक सोलह जिन गणधर।
शतक एक ग्यारह गण स्वामी, पद्मप्रभु के हैं जिनगामी।।

प्रभु सुपार्श्व गणधर पिचानवे, चन्द्रप्रभु गणधर तिरानवे।
सुविधिनाथ गणधर अट्ठासी, प्रभु शीतल गणधर सत्तासी।।

प्रभु श्रेयांस गणनाथ सतत्तर, वासुपूज्य प्रभु छ्यासठ गणधर।
विमलनाथ जिन गणधर पचपन, अर्धशतक गणि हैं अनंत जिन।।

तैतालीस धर्म गणनाथा, छत्तीस शांति झुकावें माथा।
कुंथुनाथ गणधर पैंतीसा, अरहनाथ गणधर जिन तीसा।।

मल्लिनाथ अठवीस गणेशा, मुनिसुव्रत अट्ठारह ईशा।
हैं सत्रह गणपति नमिनाथा, ग्यारह नेमिनाथ गणनाथा।।

पार्श्वनाथ गणधर दस स्वामी, सन्मति ग्यारह गणधर नामी।
एक हजार चार सौ उनसठ, सब गणधर हैं भवसागर तट।।

समवसरण में अहा विराजे, द्वादश सभा आपसे साजै।
दिव्यध्वनि को आप झेलते, द्वादशांग में आप खेलते।।

सब जीवों की शंका हरते, किन्तु हृदय शंका न धरते।
मोक्षमार्ग सबको दिखलाते, चारों ही अनुयोग सुनाते।।

निश्चय से मुक्ति पथ गाया, प्रभु साधन व्यवहार बताया।
शुद्धातम का अनुभव करते, गुणस्थान में झूला करते।।

जो भवि तुम्हें हृदय से ध्याता, नाथ! आप सम ही बन जाता।
कर्मनाश विधि तुमने पाई, चेतनता चिद्रूप समाई।।



धन्य-धन्य प्रभु गौतमस्वामी, वीतरागता अति अभिरामी।
महावीर मुक्ति पद पाया, तुमने केवलज्ञान जगाया।।

मावस में भी पूनम आई, तीन लोक में खुशियाँ छाईं।
देवों ने तब उत्सव कीना, धन्य हुआ कार्तिकी महीना।।

भारत में दीपावलि आई, गुरु-शिष्य की महिमा गाई।
प्रभु ने मोक्षलक्ष्मी पाई, ज्ञानलक्ष्मी तुम प्रगटाई।।

मोक्ष-ज्ञान लक्ष्मी जो ध्याता, वो इसभव परभव सुख पाता।
दीन कोई धन लक्ष्मी ध्यावे, दुःखकारी मिथ्यात्व बढ़ावे।।

भव-भव प्रभु हम तुमकों ध्यावें, भव-भव के दुःख शीघ्र नशावें।
हो सम्यग्दर्शन सुखकारी, चरण-शरण यह विनत हमारी।।

गणधर चालीसा सदा, जो भवि पढ़े-पढ़ाय।
रोग-शोक संकट कटे, दीपावलि शुभ पाय।।
महावीर की आरती, गणधर प्रभु गुणगान।
दीपावलि को जो करे, हो 'विमर्श' वरदान।।

।। इति श्री गणधर चालीसा।।

जब तपस्वी के मोह के उदय से राग-द्वेष उत्पन्न होते हैं उसी समय आत्मस्वरूप की भावें जिससे क्षण भर में राग-द्वेष शान्त हो जाते हैं। -श्री समाधितंत्र जी 39

आइरिय विमरससायरेण विरइदा

## सरूव थुदी

उवओगमओ अप्पा अहं,
जाणगसरूवो मम अहा।
णिद्दंदो अहमणिबंधो हं,
आणंदकंद–सहज–महा।।
जाणिय सया दु संतमओ,
णिय संतरस–पीउं सया।
णिय संतरस–लीणम्मि हं,
णिय चेद–धुवरूवो अहा।।1।।

महसु असंखपदेसेसुं,
भयवंत–अप्पा णिवसदि।
हं हुवमि परमप्पा सयं,
परमप्प–रूवो विलसदि।।
हं सिद्धकुल–अंसो हुवमि,
हु दंसावदि भविदव्वदा।
णिय सत्ति–अंसदो सिद्धो हं,
दव्वस्स णिय णिय दव्वदा।।2।।



रागादि–भाव दु विगडीआ,
दव्वम्मि णिय णवि दंसणं।
परदव्व–परभावाण दु,
रूवम्मि चिद णवि फंसणं।।
पुहु सव्वदो विर सव्वदो,
अवियाररूवो मम अहा,
हं पूर–सहजसहावदो,
जो हु वीदरागमओ कहा।।3।।

गुण–दव्वदो हं धुवमहा,
परिणमं णियदं पत्तो हं।
परिणदं अत्तमओ खलु,
सत्तीए णियदओ अत्तो हं।।
कारण सयं हं कज्जमवि,
सिवमग्गो मग्गफलं सयं।
हं भावलिंगी संतो जाणग–
हुवमि सफल हु जीवणं।।4।।

**आचार्य विमर्शसागर विरचित**

## स्वरूप स्तुति

हूँ आत्मा उपयोगमय,
ज्ञायक स्वभाव मेरा अहा।
निर्द्वन्द हूँ निर्बन्ध हूँ,
आनन्दकन्द सहज अहा।।
नित शान्तरसमय जानकर,
निज शान्तरस नित पानकर।
निज शांतरस में लीन हूँ,
ध्रुवरूप निज अनुभव अहा।।1।।

मेरे असंखप्रदेश में,
भगवान् आतम बस रहा।
मैं हूँ स्वयं परमात्मा,
परमात्मरूप विलस रहा।।
हूँ सिद्धकुल का अंश मैं,
बतला रही भवितव्यता।
मैं सिद्ध शक्ति अंश से,
निजद्रव्य की निज द्रव्यता।।2।।



रागादि भाव विकार का,
निजद्रव्य में दर्शन नहीं।
परद्रव्य या परभाव का,
चित् रूप स्पर्शन नहीं।।
सबसे पृथक् सबसे विलग,
अविकार रूप मेरा अहा।
मैं पूर्ण सहज स्वभाव से,
जो वीतरागमयी कहा।।3।।

हूँ द्रव्य-गुण से ध्रुव अहा,
नित परिणमन को प्राप्त हूँ।
परिणमन निश्चय आप्तमय,
शक्ति से निश्चय आप्त हूँ।।
कारण स्वयं हूँ कार्य भी,
शिवमार्ग स्वयं हूँ मार्गफल।
मैं भावलिंगी संत हूँ,
ज्ञायक हूँ मैं, जीवन सफल।।4।।

आइरिय विमरससायरेण विरइदा

# सुद्धप्पाणुवेक्खा

(मंगलायरणं)

पंच-गुरूणं वंदिउं, आगमचक्खू महाइ।
गामि बारहभावणं, सव्वलोय-सुहदाइ।।

## अणिच्चाणुवेक्खा

अहो! को दु णिय जगम्मि अस्सिं कं सकीय मण्णेमु।
मित्त-सव्व-परकीय-होहिंति कं सकीय जाणेमु।।
धण्णा पुरुष-सलाग-इगाहो सव्व-मिच्चुणो मित्ता।
अणिच्चस्स कीडो सव्वे इह हत्थि-पदत्ति-रहिगा।।

## असरणाणुवेक्खा

अप्पा हो! सरणं अण्णेसदि चउगदीए ण जादि।
णव-परिवार-गिहं णिम्मेदि णं असरणं-कहेदि।।
देव-धम्म-गुरु-दिगंबरा हि सरणं णे भण्णंति।
स चिददेवं सरणं पत्ता भवी सिवगदिं जंति।।

## संसाराणुवेक्खा

अप्पा हो! दु चदुग्गदीए जम्म-मरण-दुह-पत्ता।
पुण्णोदयदो जाद-संपदा मणो पुण वि गिद्धत्ता।।



एसो भववासो दुहगारी खणिगं संति ण लादि।
सुद्धं जाणगपहुं झाइदु पणमगदिं जो लादि।।

## एगत्ताणुवेक्खा

इत्थी-पुत्त-स-परिजण-सव्वे पुण्णोदयम्मि मित्ता।
जीवो एग हु असाद-समये कस्स दु को संगित्ता।।
एस सत्थगिह-भवो दु भाऊ! कज्जे केई णावदि।
सच्च-गिहं हु एग-णियप्पा, णाणी स-गिहं पावदि।।

## अण्णत्ताणुवेक्खा

अप्पा हो! मोहस्स दु उदये स-परं भेयमजाणं।
तणं धणं परि-सजणा सव्वे णियं सकीयं माणं।।
हा-हा एसा भत्ति-अणाई णवि कया वि विसराइ।
सुणि जिणवयं-पररुइं चत्ता सुगुरु-सिक्खा दाइ।।

## असुचित्ताणुवेक्खा

अप्पा हो! हु तणं महासुचि सया अणाणी इच्छदि।
णाणालंकारेण सया दु इणं तणं तु मंडदि।।
णाणा सुरहि-लेव-सिंगारं करदि सुहं मण्णेदि।
णिय - सुहहेदू सुद्धणाणमय-चेदं ण जाणेदि।।

## आसवाणुवेक्खा

अप्पा हो! मिच्छादंसण-अविरदि-भावाणं घडिदा।
जोग-पमाद-कसायासव-भावाणं सव्व-धरिदा।।
पुण्ण-पाव-रागादि-दुहिद-भावेसु सुहं मण्णीआ।
सुद्ध-णिरासव-वीदराग-णिय-णादं ण जाणीआ।।

## संवराणुवेक्खा

अप्पा हो! तेरसविह चरियं हियएणं संगच्छदु।
बारसाणुवेक्खं धम्मा परिसह-बाबीसं धारदु।।
सुह-भावेहिं असुह - संवरं पुव्वम्मि लहिदूणं।
सुहासुहस्स संवरं वुच्चइ सुभभावेणं पुण्णं।।

## णिज्जराणुवेक्खा

अप्पा हो! समये समये सविवाग-णिज्जरं पत्ता।
कम्मासवो णिरंतर-जादो कम्मजयं णवि पत्ता।।
सप्पजोग-सुद्धुवजोगा अविवाग-णिज्जरं दाइ।
संवर-णिज्जर-पहेण णाणी मुत्तिवहुं आणाइ।।

## लोगाणुवेक्खा

अप्पा हो! सडदव्वाणं पुण जत्थ रहेदि वसदी।
चोदस-राजु-लोगमणादी भवभूदाणं वसदी।।



जम्म-मरण-पत्तेग-पदेसे हा पत्तीअ अणंता।
पहू णियप्पासंख-पदेसी ण हिदयम्मि वसंता।।

## बोहि दुल्लहाणुवेक्खा

अप्पा हो! पुण्णस्स उदयदो तुं णरभवं लहीअ।
बहि-विहवं गिहि-मुणिवयं तु सम्मं ण भावीअ।।
णवगेवेज्ज-सुहं पत्ता रे! बोहि-बोहणमजग्गो।
सिद्ध-समो भयवं अप्पा भम्मिद-भवेसु दुब्भग्गो।।

## धम्माणुवेक्खा

अप्पा अहो! अहिंसा धम्मं अरिहंतेहि हु भणिदा।
रागदोस - मदमोहविहूणं - वत्थुभावं भणिदा।।
पंथाणं वत्थं उत्तरदु मोक्खपंथ-उर-धारदु।
वीदराग-धम्मो हु सच्चो चेदण-भुल्ल-संभालदु।।

बारहभावं जो भवी, भाव-सहिद भावेदि।
वेरग्गस्स विमस्सिउं, परं दसं पयडेदि।।

कुल संतानों से नहीं, संस्कारित संतानों से चलते हैं।

-श्रमणाचार्य विमर्शसागर

## आचार्य विमर्शसागर विरचित

# शुद्धात्मानुप्रेक्षा

(मंगलाचरण)

बंदूँ पंच परम् गुरु, आगम चक्षु महान।
गाऊँ बारह भावना, सर्व लोक सुख दान।।

### अनित्य अनुप्रेक्षा

अहो! कौन इस जग में अपना, किसको अपना मानूँ।
साथी सभी पराये होंगे, किसको अपना जानूँ।।
धन्य शलाका पुरुष एक दिन, सब मृत्यु के साथी।
है अनित्य का खेल यहाँ सब, रथिक पियादे हाथी।।

### अशरण अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! शरण खोजता चहुँगति शरण न पावे।
नूतन घर-परिवार सजावे, अशरण ही कहलावे।।
परम दिगम्बर देव-धर्म-गुरु, ये ही शरण कहाते।
निज चैतन्यदेव शरणागत, भविजन शिवगति पाते।।

### संसार अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! चतुर्गति में, जनम-मरण दुःख पाया।
पुण्य उदय से संपत्ति पाई, मन फिर भी ललचाया।।



यह संसार-वास दुखकारी, क्षणिक शांति न पावे।
सहज शुद्ध ज्ञायक प्रभु ध्यावो, जो पंचमगति ल्यावे।।

### एकत्व अनुप्रेक्षा

स्त्री-पुत्र स्वजन-परिजन सब, पुण्य उदय जब साथी।
जीव असाता समय अकेला, किसका कौन संगाती।।
यह संसार स्वार्थगृह भाई, कोई काम न आवे।
एक निजातम ही साँचा गृह, ज्ञानी निज गृह पावे।।

### अन्यत्व अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! मोह उदय में, स्व-पर भेद न जाना।
तन-धन-परिजन स्वजन सभी को, अपना अपना माना।।
हाय-हाय यह भूल अनादि, कबहुँ न बिसराई।
जिनवाणी सुन पर-रुचि त्यागो, सद्गुरु शिक्षा दाई।।

### अशुचि अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! महा अशुचि तन, अज्ञानी नित चावे।
नाना भूषण अलंकार से, यह तन नित्य सजावे।।
नाना सुरभित लेप करे, शृंगार करे, सुख माने।
सुख का कारण शुद्धज्ञानमय चेतन न पहिचाने।।

### आस्रव अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! मिथ्यादर्शन, अविरति भाव बनाये।
अन्य प्रमाद कषाय योग सब, आस्रव भाव धराये।।
पुण्य-पाप रागादि भाव, जो दुःखमय हैं, सुख माना।
शुद्ध निरास्रव वीतराग निज ज्ञायक न पहिचाना।।

### संवर अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! तेरह विध चारित्र हृदय स्वीकारो।
द्वादश अनुप्रेक्षा दसधर्म परिषह बाइस धारो।।
शुभ भावों से अशुभ भाव का संवर पूर्व लहावे।
शुद्धभाव से भावशुभाशुभ संवर पूर्ण कहावे।।

### निर्जरा अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! समय-समय सविपाक निर्जरा पाई।
कर्म आस्रव रहा निरंतर कर्म विजय न पाई।।
स्वात्मयोग, शुद्धोपयोग अविपाक निर्जरा दाता।
ज्ञानी संवर-निर्जर पथ से मुक्तिवधु को लाता।।

### लोक अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! छह द्रव्यों का रहता जहाँ बसेरा।
चौदह राजू लोक अनादि, भव भूतों का डेरा।।



जन्म-मरण इक-इक प्रदेश पर हाय अनन्तों पाये।
कभी असंख प्रदेश निजातम प्रभु न हृदय समाये।।

### बोधि दुर्लभ अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! पुण्य उदय से, नरभव तूने पाया।
बाह्य विभव श्रावक व्रत-मुनिव्रत, किंतु न समकित भाया।
नव ग्रीवक तक सौख्य लहा, रे बोधि ज्ञान न जागा।
सिद्ध समा भगवान आत्मा, भव-भव भ्रमा अभागा।।

### धर्म अनुप्रेक्षा

अहो आत्मन्! अरिहंतों ने धर्म अहिंसा गाया।
रागद्वेष-मद-मोहरहित वस्तुस्वभाव बतलाया।।
सर्व पंथ के वसन उतारो, मोक्षपंथ उर धारो।
वीतरागमय धर्म ही साँचा, चेतन भूल सुधारो।।

जो भवि बारह भावना, भाव सहित नित भाय।
परमदशा वैराग्य की, वह 'विमर्श' प्रगटाय।।

ज्ञानहीन मृततुल्य है किन्तु
संस्कार हीन तो मरा हुआ ही है।
-श्रमणाचार्य विमर्शसागर

## श्रावक प्रतिक्रमण (लघु)

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः
चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने।
परमात्मप्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः।।

अर्थ– उन श्री जिनेन्द्र–परमात्मा सिद्धात्मा को नित्य नमस्कार है, जो चिदानंदरूप हैं (अष्ट कर्मों को जीत चुके हैं), परमात्मा स्वरूप हैं और परमात्म–तत्त्व को प्रकाशित करने वाले हैं।

पाँच मिथ्यात्व, बारह अव्रत, पन्द्रह योग, पच्चीस कषाय–इन सत्तावन आस्रवों के पाप लगे हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें।

नित्य–निगोद सात लाख, इतर–निगोद सात लाख, पृथ्वीकाय सात लाख, जलकाय सात लाख, अग्निकाय सात लाख, वायुकाय सात लाख, वनस्पतिकाय दस लाख, दो–इन्द्रिय दो लाख, तीन इन्द्रिय दो लाख, चार इन्द्रिय दो लाख, नरकगति चार लाख, तिर्यंचगति चार लाख, देवगति चार लाख, मनुष्यगति चौदह लाख, ऐसी चौरासी लाख योनियाँ एवं एक सौ साढ़े निन्यान्वे लाख कुल कोटि, सूक्ष्म–बादर,



पर्याप्त–अपर्याप्त भेदरूप अनेकों जीवों की विराधना की हो, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें।

तीन दंड, तीन शल्य, तीन गारव, तीन मूढ़ता, चार आर्त्तध्यान, चार रौद्रध्यान, चार विकथा–इन सबके पाप लगे हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें।

व्रत में, उपवास में अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार के पाप लगे हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें।

पाँच मिथ्यात्व, पाँच स्थावर घात, त्रस घात, सप्त व्यसन, सप्त भय, आठ मद, आठ मूलगुण, दस प्रकार के बहिरंग–परिग्रह, चौदह प्रकार के अंतरंग–परिग्रह सम्बन्धी पाप किये हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें। पन्द्रह प्रमाद, सम्यक्त्वहीन परिणाम के पाप किये हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें। हास्य–विनोदादि के दुष्परिणामों से, दुराचार, कुचेष्टा के पाप किये हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें।

हिलते, डुलते, दौड़ते–चलते, सोते–बैठते, देखे, बिना देखे, जाने–अनजाने, सूक्ष्म व बादर जीवों को दबाया हो, डराया हो, छेदा हो, भेदा हो, दुःखी किया हो, मन–वचन काय कृत मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें।

मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका–रूप चतुर्विध संघ की, सच्चे देव–शास्त्र–गुरु की निन्दा कर अविनय के पाप किये हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें। निर्माल्य–द्रव्य का पाप लगा हो, मेरा वह सब पाप मिथ्या होवे। मन के दस, वचन के दस, काया के बारह–ऐसे बत्तीस प्रकार के सामायिक में दोष लगे हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें। पाँच इन्द्रियों व मन से जाने–अनजाने जो पाप लगे हों, मेरे वे सब पाप मिथ्या होवें। मेरा किसी के साथ बैर–विरोध, राग–द्वेष, मान, माया, लोभ, निन्दा नहीं है, समस्त जीवों के प्रति मेरी उत्तम क्षमा है।

मेरे दु:खों का क्षय हो, मेरे कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि लाभ हो, मेरा सुगति में गमन हो, मुझे समाधिमरण प्राप्त हो, जिनेन्द्र देव की गुणरूप सम्पत्ति मुझे भी प्राप्त हो, मुझे चारों गतियों के दु:खों से मुक्ति मिले।

ॐ शांति: शांति: शांति:

अनादि–अनिधन एक ही पंथ–जिनागम पंथ जिनागम पंथ

भावलिंगी संत का उद्घोष जिनागम पंथ का

गर्व से कहो, हम जिनागम पंथी है



# सामायिक पाठ

पद्यानुवाद – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

हे जिनदेव! आत्मा मेरी, धारण करे नित्य यह नेम।
हार्द भाव हो सब जीवों में, गुणीजनों में होवे प्रेम।।
जो ग्रहीत हो रहे दु:खों से, उन पर करुणा-स्त्रोत बहे।
हो माध्यस्थ भाव उन पर जो जिनमत से विपरीत कहे।।1।।

हे जिनेश! तव पद-प्रसाद से, हो इतनी शक्ति संचार।
सर्व दोष विरहित अनन्त शक्तिशाली आतम अविकार।।
अविनाशी अखण्ड निज आतम, तन से विलग करूँ ऐसे।
महासुभट तलवार-म्यान को, अलग-अलग करते जैसे।।2।।

सुख-दु:ख में अरि-बन्धु वर्ग में, तथा अखिल संयोग-वियोग।
भवन और उपवन में भी नहिं, हर्ष-खेदमय हो उपयोग।।
खोकर ममता बुद्धिहृदय हो, समता का संचार सदा।
हे प्रभु! अखिल वस्तुओं से, अपनत्व भाव हो जाये विदा।।3।।

ज्यों प्रदीप की ज्योति समुज्ज्वल, अंधकार का करती नाश।
हे जिन! तव द्वय चरण-कमल, अज्ञान महातम करें विनाश।।

कीलित सम उत्कीर्ण रूप हों, मेरे हृदय विराजित वे।
हे मुनीश! प्रतिबिम्ब तुल्य हों, अविचल लीन अबाधित वे।।4।।

यदि प्रमाद से इधर-उधर, चलते-फिरते इस वसुधा पर।
जीव कोई एकेन्द्रिय आदिक्, दुःखी हुआ हो मुझसे गर।।
क्षत, विक्षत, पीड़ित, मेलित, घर्षित, विकलित टकराये कभी।
मिथ्या हों हे देव! हमारे, दुराचरण जो हुये सभी।।5।।

हा-हा मुझ दुर्बुद्धि ने किया, मोक्षमार्ग से कुपथ गमन।
जो कषाय इन्द्रिय विषयों के, वशीभूत हो हे स्वामिन्!
इस निमित्त मम शुद्ध-आचरण, जो भी लोप हुआ हे नाथ!
वह दुष्कृत मेरा मिथ्या को प्राप्त होय हे दीनानाथ!।।6।।

हे जिनेश! मन-वचन-काय वा जो कषाय से उपजा पाप।
है भव-भव का बीजभूत वह, देता भव-भव में संताप।।
आलोचन, निन्दा, गर्हा से, अब विनाश करता वैसे।
मंत्र शक्ति से वैद्य महाविष, शान्त किया करता जैसे।।7।।

गुणित विशुद्धि धारणकर, उत्तम-चारित जो वरण किया।
हा! प्रमाद से उस व्रत में, अतिक्रम व्यतिक्रम आचरण लिया।।
कभी हुये अतिचार और जो, अनाचरण से दोष प्रभो!
सर्व शुद्धि के हेतु प्रतिक्रम, करता अब निर्दोष विभो!।।8।।



निर्मल मन की निर्मलता का, नाश अतिक्रम कहा विभो!
शीलवृत्ति का उल्लंघन, इहलोक व्यतिक्रम कहा प्रभो!
इन्द्रिय - विषयों में वर्तन, करते रहना अतिचार कहा।
अति आसक्त विषय में रहना, अनाचरण का भाव कहा।।9।।

जो पद-वाक्य-अर्थ-मात्रा में, हुआ वचन स्खलन मेरा।
वह प्रमाद से हुआ देवि! हाँ उससे मैं अनभिज्ञ रहा।।
ओ जिनवाणी माँ! मेरा, अपराध क्षमा यह कर देना।
मेरी अन्तर आतम केवलज्ञान बोधि से भर देना।।10।।

जिनवाणी माँ! चिन्तित वर, देने में चिन्तामणी समान।
भावशुद्धि, सम्बोधि, समाधि, देती शिवसुख का वरदान।।
ओ जिनवाणी माँ! तेरा, वन्दन स्तवन दिनरात करूँ।
तेरे शुभ प्रसाद से निज, आतम स्वरूप को प्राप्त करूँ।।11।।

गणनायक मुनिवृन्द किया करते जिसका स्मरण सदा।
जिसका नरपति सुरपति भी, स्तवन कर होते मुदित सदा।।
वेद-पुराण-शास्त्र भी जिसका, करते हैं नित ही गुणगान।
वह देवों का देव हमारे, हृदय विराजे यह अरमान।।12।।

जो अनंत-दृग-ज्ञानमयी, जिनका अनंतसुख-रूप स्वभाव।
वर्धमान हो भवसंतति उन सब विभाव का किया अभाव।।

जो परमात्म नाम का धारक, सतत् समाधिगम्य कहा।
वह देवों का देव हमारे, हृदय विराजित रहे सदा।।13।।

अखिल विश्व का ज्ञाता-दृष्टा, दुःख समूह का जो नाशक।
रहता नित लोकान्त अवस्थित, स्वपर-ज्ञान का जो भासक।।
जो योगीजन के द्वारा ही, अवलोकन के योग्य कहा।
वह देवों का देव हमारे, हृदय विराजित रहे सदा।।14।।

जनम-मरण दुःख से अतीत, जो मोक्षमार्ग का प्रतिपादक।
तीन लोक अवलोक रहा, अवलोकन में ना कुछ बाधक।।
देहातीत कलंक-रहित, ऐसा जिसको अकलंक कहा।
वह देवों का देव हमारे, हृदय विराजित रहे सदा।।15।।

तीन लोक के सब जीवों में, आदर पा जो व्याप रहा।
वह रागादिक महादोष भी, जिससे थर-थर काँप रहा।।
उसे इन्द्रियातीत अतीन्द्रिय, ज्ञानमयी अनपाय कहा।
वह देवों का देव हमारे, हृदय विराजित रहे सदा।।16।।

विश्व क्षेम की सहजवृत्ति-जिसकी जो कहलाता व्यापक।
कर्मबन्ध का जो विध्वंसक, सिद्धस्वरूपी है ज्ञायक।।
जिसका निर्मल ध्यान मिटाता, ध्याता के कुविकार अखिल।
वह देवों का देव हमारे, हृदय विराजित रहे अचल।।17।।



छू सकती आदित्य किरण नहिं, अंधकार का महावितान।
कर्म कलंक दोष भी जिसका, करते नापर्शित आह्वान।।
जो है नित्य निरंजन, होकर एक रूप भी नाना रूप।
उसी आप्त प्रभु की शरणा को, प्राप्त हुआ जो स्वयं अरूप।।18।।

हे जिनेश! त्रैलोक्य प्रकाशक - ज्ञानसूर्य हो जहाँ उदित।
वहाँ भास्कर भुवन-प्रकाशक, कैसे हो सकता शोभित ?
थिर जो देव! स्वात्मा में, कहलाते हैं जो ज्ञानमयी।
उसी आप्त प्रभु की शरणा को, प्राप्त हुआ जो आत्मजयी।।19।।

झलक रहा जिनकी विद्या में, लोक-अलोक सकल संसार।
दिखता वह स्पष्ट रूप से, पृथक्-पृथक् निज-निज अनुसार।।
शुद्ध शान्तमय शिवस्वरूप जो, आदि-अंत से हीन कहा।
उसी आप्त प्रभु की शरणा को, प्राप्त रहूँ यह भाव सदा।।20।।

तरु निकाय होता ज्यों भस्मीभूत हुताशन के द्वारा।
उसी भाँति जिसने दुःख, चिंता, मान, मूर्च्छा को मारा।।
काम, शोक, भय, निद्रा जिसके द्वारा क्षय को प्राप्त हुये।
उस अविकारी आप्तदेव की, शरणा को हम प्राप्त हुये।।21।।

बनता नहीं शुभासन विधिवत्, घासपूग या अन्य मही।
काष्ठफलक पाषाण सुखासन भी बुधजन को मान्य नहीं।।

इन्द्रिय-विषय कषाय अराति, हुये शान्त निष्क्रांत जहाँ।
वह निर्मल स्वातम शुद्धासन, सुधिजन को स्वीकार यहाँ।।22।।

आसन लोक - प्रतिष्ठा पूजा, महासंघ का सम्मेलन।
नहीं समाधि के यह साधन, प्रथा कहें इनको सुधिजन।।
इसीलिये हे भद्र! बाहरी, सर्व-वासनायें तू छोड़।
निज अध्यात्म निरत होकर तू, सदाकाल उसमें रति जोड़।।23।।

जो कुछ बाह्य पदार्थ यहाँ, वह मेरा कभी नहीं किंचित्।
उसी भाँति हो सकता कैसे, मैं भी उनका कभी क्वचित्।।
इस प्रकार दृढ़ निश्चय कर तू, सर्व बाह्य आडम्बर छोड़।
हे सुभद्र! निज आतम में, थिर हो शश्वत उसमें रति जोड़।।24।।

जो निजात्मा को निज में ही, कर लेता है अवलोकन।
वह निश्चय दृग ज्ञानमयी, होता विशुद्ध अनुपम चेतन।।
जो योगी एकाग्रचित्त थित, यत्र-तत्र सर्वत्र कहीं।
सत्यमान उसको होती है, परम-समाधि प्राप्त वहीं।।25।।

अहा! आत्मा मम एकाकी, शश्वत शाश्वत अति निर्मल।
अनुपम ज्ञानस्वभाव सहित, पररूप नहीं सिद्धांत अटल।।
अन्य बाह्य सब वस्तु भावरागादि कर्म से ही निष्पन्न।
अतः विनाशी मैं अविनाशी, मेरा आत्मा इनसे भिन्न।।26।।



चेतन की तन के संग भी, है नहीं एकता जब संभव।
पुत्रादिक के साथ ऐक्य फिर, क्यों कैसे होगा संभव?
जब शरीर से जिस क्षण भी, यह चर्म अलग हो जायेगा।
तब निश्चय से रोमकूप भी, उस क्षण ही खो जायेगा।।27।।

भव-अटवी में देही प्राणी, भोग रहा बहु-दुःख दारुण।
पर-पदार्थ संयोग भाव ही, एकमात्र उसका कारण।।
शिवस्वरूप, शिवरूप मुक्ति की, इच्छा हृदय समाई गर।
तो त्रियोग से पूर्ण विलग, करना होगा संयोग निकर।।28।।

भव-अटवी में गिरने का जो, कारण कहा महाबलवान।
वह सम्पूर्ण विकल्पजाल तू, शीघ्र दूर कर पा सितध्यान।।
देख सदा निर्लेप आत्मा, सबसे विलग कर्ममल-हीन।
महामुक्ति के इच्छुक हे भवि!, हो परमात्मतत्त्व में लीन।।29।।

पुराकाल में किये शुभाशुभ, कर्म आत्मा ने जैसे।
यहाँ इस समय हुये उसी को प्राप्त शुभाशुभ फल वैसे।।
परकृत कर्म और उसका फल, अन्य जीव को हो जावे।
तब तो स्वयं किये कर्मों की, सर्व सफलता खो जावे।।30।।

सभी जीव पाते अपने द्वारा अर्जित कर्मों का फल।
देता नहीं किसी को कोई, कुछ भी यह सिद्धांत अटल।।

यह विमर्श करते रहना, हे भवि! एकाग्रचित्त होकर।
'देने वाला कोई दूसरा है' ऐसी बुद्धि खोकर।।31।।

दोष रहित निर्दोष सर्वदा सकल कर्म से रहित कहा।
ऐसा शुद्ध - बुद्ध परमातम अमितगति से वन्द्य अहा!
जिस भविजन का मन चिंतन में, लाता उस परमातम को।
वह पाता है मुक्ति निकेतन, निज वैभव शुद्धातम को।।32।।

बत्तीस इन पद्यों से जो परमात्मा को देखता।
एकाग्रमन वह भव्य ही अविनाश पद को सेवता।।
श्री अमितगति आचार्यकृत परमात्म द्वात्रिंशतिका।
पद्यानुवाद किया रहा शुभ - भाव पंचमगति का।।33।।

जो पाठ करता भाव से होता कषायों का शमन।
है वंदनीय 'विमर्श' यह मिट जाये भव आवागमन।।

।। इतिश्री सामायिक पाठ पद्यानुवाद।।

प्रभवो मित भाषिण:।।
प्रभु लोग प्राय: थोड़ा ही बोलते हैं।
श्री आदिपुराण जी 34/30



# आचार्य परम्परा की अर्घावली

## आचार्य श्री आदिसागर जी महामुनिराज का अर्घ

छत्तीस मूलगुण पालन करके, किया स्वयं तुमने जिनध्यान।
आदि सिन्धु आचार्य अंकली, वाले तुमको नम्र प्रणाम।।

ॐ ह्रूँ परम पूज्य आचार्य श्री आदिसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

## आचार्य श्री महावीरकीर्ति जी महामुनिराज का अर्घ

ले जलादि वसुद्रव्य से, कनक थाल जगमगाना।
महावीरकीर्ति मुनीन्द्रवर, चरण चित्त चिंतवना।।
नाथ मोहि राखो हो शरना,
जय वीतराग मुनिराज जी मोहि राखो हो शरना

ॐ ह्रूँ परम पूज्य आचार्य श्री महावीरकीर्ति जी महामुनीन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

## आचार्य श्री विमलसागर जी महामुनिराज का अर्घ

आठ द्रव्य की भर थाली ले, आठों कर्म खपाऊँ,
अष्टगुणों की सिद्धि पाकर, सिद्धलोक बस जाऊँ।
परम तपस्वी त्याग मूर्ति, श्री विमलसिन्धु के गुण गाऊँ,
निजनिधि ज्ञान सुधारस पाकर, भव वन में ना भटकाऊँ।।

ॐ ह्रूँ परम पूज्य आचार्य श्री विमलसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

## आचार्य श्री सन्मतिसागर जी महामुनिराज का अर्घ

**वसुद्रव्य सुसुन्दर सार, हाटक थाल भरा,**
**पद छोड़ूँ भक्ति अपार, भवभ्रम तुरत हरा।**
**श्री सन्मति! सिन्धु मुनीश, तुम पद पूज करूँ,**
**काटो भवबेड़ी गुणीश, यातें पग पकरूँ।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य आचार्य श्री सन्मतिसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

## आचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज का अर्घ

**शुभ भावों का निर्मल जल है, विनय भाव का है चंदन।**
**गुरु वंदन ही अक्षत है, भक्ति सुमन का अभिनंदन।।**
**मन वच तन से आत्म समर्पण, मोह क्षोभ का शमन करूँ।**
**परम पूज्य आचार्य शिरोमणि, विराग सिंधु जी को नमन करूँ।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य आचार्य श्री विरागसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

## आचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज का अर्घ

**भावों का अर्घ चढ़ाने गुरु चरणों में आये हैं।**
**निज अनर्घ पद की चाह लिये झोली फैलाये हैं।**
**शुभ अर्घ्य चढ़ा जीवन में रत्नत्रय प्रगटायेंगे।**
**गुरु विमर्श के गुणों की मंगल गीता गायेंगे।**
**गुरु की पूजा रचायेंगे, मंगल गीता गायेंगे।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य आचार्य श्री विमर्शसागर महामुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।



# आचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज की पूजन

रचयिता – श्रमणाचार्य विमर्शसागर

**गुरु विरागसागर के पद में, अर्पित भावों का चंदन।**
**श्रमण संग के नायक गुरुवर, महावीर के लघुनंदन।।**
**आओ गुरुवर हृदय विराजो, दूर करो मम आक्रंदन।**
**भवसागर से पार उतारो, नाथ! चरण में शत् वन्दन।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागरजी महामुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

**क्षीर नीर भरकर मैं लाया, स्वर्णपात्र में हे गुरुवर!।**
**द्रव्य–भाव–नोकर्म अशुचिता, धोने आया हे प्रभुवर!।।**
**हूँ अखण्ड अविनाशी चेतन, निज स्वभाव से पूर्ण प्रभो!।**
**निश्चय श्रद्धा से मिटते हैं, जन्म–जरा–मृतु रोग विभो!।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागरजी महामुनीन्द्राय जन्म–जरा–मृत्यु–विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

**राग–द्वेष की ज्वाला में, भव–भव से जलता आया हूँ।**
**हे गुरुवर! पर को अपना कह, अब तक रुलता आया हूँ।।**

**शीतल चन्दन लाया गुरुवर, भव आताप मिटाने को।**
**शुद्ध-बुद्ध ज्ञायक स्वरूप, निज से निज में प्रगटाने को।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

**पर्यायों के मद में आकर, नाथ! अनन्तों पद पाये।**
**शान्त हुई न तृष्णा गुरुवर, नहीं निरापद हो पाये।।**
**अक्षत धवल अखण्ड चढ़ाऊँ, अक्षय पद अब मिल जाये।**
**शुद्ध आत्मा के अनुभव से, नाथ! विपद अब टल जाये।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

**चतुर्गति में भटका अब तक, पंच परावर्तन करके।**
**काम वासना मिटा न पाया, हाय-हाय नर तन धरके।।**
**निज स्वभाव में रमकर गुरुवर, ब्रह्मचर्य रसपान करूँ।**
**पुष्प सुगंधित चरण चढ़ाऊँ, कामभाव अवसान करूँ।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

**तीन लोक के पुद्गल सारे, क्षुधा अग्नि के ग्रास बने।**
**शांत हुई न क्षुधा वेदना, भव-भव से हम दास बने।।**



**गुरु चरणों नैवेद्य चढ़ाऊँ, क्षुधारोग का नाश करुँ।**
**अरस, अरूप, अगंध, अस्पर्शी, शुद्धातम में वास करुँ।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

**मोहभाव से हे गुरुवर! चौदह राजू चलकर आया।**
**विषयों की वैसाखी से, चौरासी का चक्कर खाया।।**
**महा मोहतम मिट जाये, प्रगटाऊँ ज्ञानज्योति चिन्मय।**
**कंचन दीप चढ़ाऊँ गुरुवर, निज स्वभाव में हो तन्मय।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

**वसु कर्मों से हे गुरुवर! दुःख पाया कैसे बतलाऊँ।**
**भेदज्ञान प्रगटा अब कैसे, पुण्य-पाप में इठलाऊँ।।**
**सिद्ध प्रभु सम गुण प्रगटाने, अष्ट कर्म का नाश करूँ।**
**शुद्ध भाव सी धूप चढ़ाऊँ, हर्षाऊँ, उल्लास धरूँ।।**

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

**धर्म ध्यान में लीन सदा, फिर शुक्ल ध्यान पुरुषार्थ करें।**
**नाथ! आप समवीर्य प्रगट हो, मुनि बन हम परमार्थ वरें।।**

क्षपक श्रेणि चढ़ केवलज्ञानी, बन भव बीज समाप्त करें।
नाथ! चरण में फल अर्पित हम मोक्षमहाफल प्राप्त करें।।

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षायिकदर्शन–ज्ञान–वीर्य–सुख, अनुजीवी गुण प्रगटाऊँ।
अवगाहन, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघु, अव्याबाध सहज पाऊँ।।
प्रतिजीवी गुण प्रगट जहाँ हों, शुद्ध सिद्ध पद मिल जाये।
नित्यानंद स्वभावी आतम फिर जग में न रुल पाये।।
यही भावना लेकर आया, श्री चरणों में हे स्वामिन्!।
दो विराग गुरु निज विरागता, पाऊँ निज चैतन्य सदन।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चरण में, अर्पित करने लाया हूँ।
ज्ञायक–ज्ञेय दोष हे गुरुवर! सहज मेटने आया हूँ।।

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

## जयमाला

जिनवाणी सुत हे गुरु! आप गुणों की खान।
सिद्ध प्रभु जैसा मिले, मुक्ति का वरदान।।

हे ऋषिवर! यतिवर! हे गुरुवर! हे मुनिवर! रत्नत्रय धारी।
छत्तीस मूलगुण पाल रहे, व्रत समिति गुप्तियों के धारी।।



निज में अखंड ज्ञायक प्रभु की, सत्ता को जब स्वीकार किया।
जिनलिंग स्वयं की प्रगट हुआ, जन–जन ने जय–जयकार किया।।

सम्यक्त्व शुद्ध अनुभव विशुद्ध, जब निज में निज को प्राप्त किया।
चैतन्य तेज तब प्रगट हुआ, दर्शन मोहान्ध समाप्त किया।।

सम्यक्त्व महानिधि की महिमा तिहुँ लोकों में गाई जाती।
अमरों की मनहर अमरपुरी इसके आगे शर्मा जाती।।

हे नाथ! ज्ञान की महिमा को, निज भेदज्ञान से जाना है।
मैं ज्ञानानंद स्वभावी हूँ, अनुभव से आप बखाना है।।

हे ज्ञान–ध्यान तप लीन श्रमण, मेरे अन्तस में वास करो।
शुद्धात्म ज्ञान हो प्रगट मेरे, अज्ञान भाव का नाश करो।।

बाईस परीषह, द्वादश तप, दस धर्म सहज ही पाल रहे।
शुद्धोपयोग में रमकर के, शुभ–अशुभ सहज ही टाल रहे।।

व्यवहार और निश्चय स्वरूप, रत्नत्रय के आराधन में।
रहते हो गुरुवर आप निरत, निज पंचाचार के पालन में।।

शुद्धात्म तत्त्व के अनुभव की, नित मणियाँ बाँटा करते हो।
षट्द्रव्यों में चैतन्य द्रव्य–गुण–पर्यय छाँटा करते हो।।

पाने को नित्य निराकुल सुख, अनुभव पथ पर बढ़ते जाते।
आगम कहता है शिवपथ पर, ये कर्मों से लड़ते जाते।।

अध्यात्म और आगम सचमुच, साकार आपकी चर्या में।
हे महायोगी! हे महासन्त! अनुभव प्रगटा है किरिया में।।

मैं भी अनगार बनूँ गुरुवर, बस यही भावना भाता हूँ।
शुद्धात्म प्रकाशी महा अर्घ्य, गाकर जयमाल चढ़ाता हूँ।।

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनीन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

मंगल की शुभ भावना, स्वातम मंगल पाय।
मंगल भावों से गुरु, पुष्पांजली चढ़ाय।।

(परिपुष्पांजलिं क्षिपामि)

**पुरुष कौन?**

स पुमान् यः पुनीते स्व कुलं जन्म च पौरुषैः।
भटब्रुवो जनो यस्तु तस्यास्त्व भवनिर्भुवि।।

श्री आदिपुराण जी 28/131

अर्थात् जो अपने पराक्रम से अपने कुल और जन्म को पवित्र करता है वास्तव में वही पुरुष कहलाता है, इसके विपरीत जो मनुष्य झूठ-मूठ ही अपने को वीर कहता है पृथ्वी पर उसका जन्म न लेना ही अच्छा है।



## परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज की पूजन

रचयिता : श्रमण विचिन्त्यसागर (संघस्थ)

मन भाव सजाकर ये, गुरु चरणों में आये।
गुरु रत्नत्रय धारी, हम रत्नत्रय चाहें।
आओ तिष्ठो गुरुवर, मेरे हृदयासन पर।
करदो हमको पावन, अपने द्वय-पग धरकर।
दिखलाओ हे गुरुवर! अब मुक्ति की राहें। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागरजी महामुनीन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

भावों का जल भरकर, श्रद्धा भाजन लाये।
तुम जैसी निर्मलता, पाने मन ललचाये।।
मिथ्यात्व असंयम का, अंधियार घना छाया।।
अविनाशी चेतन का, नहिं रूप नजर आया।।
मेंटो ये जनम-मरण, शुभ भाव सजा लाये। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागरजी महामुनीन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

रागादिक भावों से, भवताप बढ़ाया है।
स्वाभाविक शीतलता, का घात कराया है।
अर्पित गुरुवर चरणों, ये मलयागिरि चंदन।
मेंटो गुरुवर मेरा, ये भव भव का क्रन्दन।
जिसमें भवताप न हो, वो वैभव मिल जाये। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागरजी महामुनीन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अब तलक विभावों की, परिणति में भरमाया।
स्वातम पद पाने की, मन चाहत ले आया।
ये पुंज धवल अर्पण, मम् भाव धवल होवें।
पर्यायों में अपनी, आतम बुद्धि खोवें।
सम्पूर्ण विभावों की, अब संतति नश जाये। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागरजी महामुनीन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम आत्मा का, स्वामी हूँ हे गुरुवर!
अब्रह्म के वश होकर, भटका हूँ मैं दर – दर।
निज परमब्रह्म चेतन, रस का रसपान करूँ।



शैलेषि अवस्था को, पाने मन भाव धरूँ।
ये पुष्प तुम्हें अर्पित, मम् काम विनश जाये। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनीन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज चिदानंद–रस का, मैं पूर्ण समुन्दर हूँ।
गुरुवर अनंतबल का, मैं स्वामी अंदर हूँ।
ये क्षुधा की बीमारी, भव – भव भटकाती है।
जितना मैं तृप्त करूँ, ये बढ़ती जाती है।
ये क्षुधा नशाने को, नैवेद्य चरण लाये। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागरजी महामुनीन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्ध बना गुरुवर, पर में ही भरमाया।
निज का पर का गुरुवर!, नहिं भेद समझ पाया।
ये दीप समर्पित है, मोहान्ध नशाने को।
निज की चैतन्यमयी, परिणति प्रगटाने को।
आशीष यही देना, यह मोह विनश जाये। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागरजी महामुनीन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जब कर्म उदय आये, मैंने राग और द्वेष किया।
कर्मों ने जो भी दिया, मैंने वैसा भेष लिया।
कर्मों के वश होकर, भव रीति बढ़ाई है।
निष्कर्म निजातम से, न प्रीति लगाई है।
ज्यों अनल में धूप जले, मम् कर्म भी जल जायें। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागरजी महामुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

संयोग सजाकर के, सुख मान रहा था मैं।
उनकी नश्वरता से, अंजान रहा था मैं।
भव-भव में कर्मों के, फल में ललचाया हूँ।
निज गुण के फल पाने, चरणों में आया हूँ।
सुख रस से भरा हुआ, शुद्धातम फल पायें। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागरजी महामुनीन्द्राय महामोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घावलियों के संग, शुभभाव चढ़ाते हैं।
चाहत अनर्घ पद की, नित हृदय सजाते हैं।
स्वातम अनर्घ पद बिन, भव-भव में दुःख पाया।



सुख पाने पद पाये, पर सुख न कहीं पाया।
अक्षय स्वातम पद का, अक्षय सुख मिल जाये।। गुरु...

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

## जयमाला

निस्पृहता की आप हो नूतन परिभाषा।
चर्या गुरुवर आपकी बोधि की भाषा।।
दर्शन ज्ञान चरित्र शुभ तप और वीर्याचार।
पूरी दृढ़ता से करें पालन पंचाचार।।
मन वच तन को गुप्तकर आतम करें विहार।
अशुभ टला, शुभ चाह न, शुद्ध का करें विचार।।
सत्य अहिंसा, शील और अपरिग्रह का हार।
अचौर्य आदि महाव्रतों से चेतन श्रृंगार।।
क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, तप त्याग।
आकिन्चन संयम धरम, ब्रह्मचर्य अनुराग।।
तरुणाई में ही लगी अच्छी संयम राह।
विषय भोग भोगे नहीं न ही किया विवाह।।

विषय भोग संसार से जगा विरक्ति भाव।
गुरु विराग को पा लिया जैसे शीतल छाँव।।
गुरु विराग में कर लिया मात-पिता का दर्श।
छोड़ नाम राकेश आप, धारण किया 'विमर्श'।।

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये जयमाला पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरुवर के पावन गुणों की मंगल गीता गाते हैं।
आज यहाँ गुरु पावन गुण हम गाते और सुनाते हैं।।
गुरुवर की इस आसिका से भव के पाप नशाते हैं।
श्री गुरुवर की आसिका हम अपने शीष चढ़ाते हैं।।

(परि पुष्पांजलिं क्षिपामि)

### मुनिराज वन्दना

पाप पंथ परिहरे, मोक्ष पंथ पगधरे।
अभिमान नहीं करें, निंदा को निवारी है।
छोड़यो है संसारी संग, ज्ञानी साथे राचो रंग।
सुमति को करे संग, बड़ो उपकारी है।।1।।
मुनिमन निर्मल जैसो है गंगा को जल।
काटत करमफंद, नव-तत्त्व धारी है।
संयम सो करे संग, बारह विधि धारें तप।
ऐसे मुनिराज ताको वन्दना हमारी है।।2।।



## पंच परमेष्ठी आरती

रचयिता - श्रमणाचार्य विमर्शसागर

बाजे छम छम छम छमाछम बाजे घुँघरू-बाजे घुँघरू,
हाथों में दीपक लेके आरती करूँ।

पहली आरती अरिहंताणं-2
कर्म घातिया चउ णासाणं-2
चारों गुण पाने गुण वंदना करुँ, हाथों में...।

दूसरी आरति सिरि सिद्धाणं-2
पाने मुक्तिफलं णिव्वाणं-2
आठों गुण पाने गुण वंदना करुँ, हाथों में...।

तीसरी आरति आइरियाणं-2
पंचाचार निपुण समणाणं-2
बोधि गुण पाने गुण वंदना करुँ, हाथों में...।

चौथी आरती उवज्झायाणं-2
पच्चिस गुण धारी अप्पाणं-2
ज्ञान गुण पाने गुण वंदना करुँ, हाथों में...

पाँचवीं आरति सव्वसाहूणं–2
ज्ञान ध्यान तप लीन गुरूणं–2
समता गुण पाने गुण वंदना करुँ, हाथों में...
बाजे छम छम छम छमाछम बाजे घुँघरू–बाजे घुँघरू,
हाथों में दीपक लेके आरती करूँ।

## श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज आरती

रचयिता : श्रमण मुनि विचिन्त्यसागर (संघस्थ)

रत्नों का दीपक लाया, भावों का घी भर लाया।
कंचन की थाली गुरुवर आरती,
ओ गुरुवर हम सब उतारें तेरी आरती,
ओ गुरुवर हम सब उतारें तेरी आरती

ग्राम जतारा जन्म लिया है भगवती हैं माता–2
सनतकुमार के लाल तुम्हें हम–2, झुका रहे माथा।। गुरुवर...

पाँच महाव्रत धारी गुरुवर, परीषह के जेता–2
मुक्ति पथ के तुम ही गुरुवर–2, हो सच्चे नेता।। गुरुवर...

बाल ब्रह्मचारी गुरुवर न झूठा जग भाया–2
गुरु 'विराग' के चरणों आकर–2, संयम अपनाया।। गुरुवर...



धरती अम्बर दशों दिशाएँ वंदन करती हैं–2
सारी सृष्टि गुरु चरणों में–2, अभिनंदन करती है।। गुरुवर...

करुणा सागर गुरु हमारे, चरणों बलि–बलि जायें–2
जब तक मुक्ति मिले न हमको–2, भव–भव तुमको पायें।। गुरुवर...

वीतरागता गुरु की चर्या से नित झरती है–2
चरणों में नत होके साधना–2 अभिनंदन करती है।। गुरुवर...

छोटे बाबा सिद्धक्षेत्र, अहार के आप कहाते–2
जो भी श्रद्धा से आता है–2 सबके कष्ट मिटाते।। गुरुवर...

अतिशयकारी बाबा हैं ये, जो भी चरणों आते–2
अपने मन की सभी मुरादें–2 वो पूरी कर जाते।। गुरुवर...

शान्तिनाथ प्रभु के लघुनंदन, सुर–नर सब गुण गाते–2
यक्ष–यक्षिणी संग देवगण–2, पूजा नित्य रचाते।। ओ गुरुवर...

विनय से पढ़ा गया शास्त्र यद्यपि प्रमाद से विस्मृत भी हो जाता है तो भी वह परभव में उपलब्ध हो जाता है और केवलज्ञान को प्राप्त करा देता है।

–श्री मूलाचार जी 286

# श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर चालीसा

रचयिता : श्रमण मुनि विचिन्त्यसागर (संघस्थ)

दोहा

गुरु विरागसागर चरण, वंदन बारम्बार।
सच्ची श्रद्धा भक्ति से, गुरु विमर्श उर धार।।
शब्दों की सुमनावली, चरणों गुरु गुणगान।
चालीसा में कर रहे, गुरु 'विमर्श' यशगान।।

चौपाई

छत्तिस गुण से मंडित गुरुवर, विमर्शसागर सूरी यतिवर।
परम वीतरागी जिनमुद्रा, दर्शन से टूटे चिरनिद्रा।।
मार्ग शीर्ष वदि पंचम आई, गुरुवार का दिन सुखदाई।
पन्द्रह ग्यारह सन् तेहत्तर, जन्मे गुरु बुन्देली भू पर।।

नगर जतारा बजी बधाई, लखकर माँ भगवति मुस्काई।
पुत्र रतन तुमसा जब पाया, पिता सनत का मन हर्षाया।।
गौर वर्ण मूरत मनहारी, लगा मुक्ति वधु हुई तुम्हारी।
लेकिन जब तरुणाई आई, राग रंग परिणति मन भाई।।

गुरु विराग का संघ मनोहर, हो जैसे अध्यात्म धरोहर।
नगर जतारा दर्शन पाया, मन ही मन वैराग्य जगाया।।



फरवरि सत्ताइस पिचानवे, सिद्धक्षेत्र आहार जानवे।
शांतिनाथ की मूरत प्यारी, गुरुवर बने बाल ब्रह्मचारी।।

तेइस फरवरि छियानिव आया, श्री गुरु से ऐलक पद पाया।
पूर्व नाम राकेश तुम्हारा, गूँजा अब 'विमर्श' जयकारा।।
गुरु विराग दें शिक्षा-दीक्षा, पूर्व कर्म ले रहे परीक्षा।
अंतराय परीषह बन आये, 'अंतराय सागर' कहलाये।।

चतुर्मास सत्तानिव आया, भिण्ड नगर में उत्सव छाया।
'जीवन है पानी की बूँद' जब, कालजयी रचना प्रगटी तब।।
गुरुवर महाकवि कहलाये, महाकाव्य पहिचान बताये।
कमर लँगोटी लगती भारी, करली जिनदीक्षा तैयारी।।

पौषवदी एकादश आई, सोमवार मुनि दीक्षा पाई।
चौदह बारह सन् अठानवे, क्षेत्र बरासो भिण्ड जानवे।।
अध्यातम की ज्योति जलाई, समयसार की महिमा गाई।
वाणी सुन सब बने मुमुक्षु, करें प्रार्थना बनने भिक्षु।।

गुरु विराग ने क्षमता जानी, 'सूरीपद' देने की ठानी।
दो हज्जार पाँच सन् आया, गुरु विराग 'सूरीपद' गाया।।
विद्वत् जन आचार्य पुकारें, निस्पृह गुरुवर न स्वीकारें।
मन में था संकल्प निराला, गुरु बिन पद नहीं लेने वाला।।

वह भी शीघ्र घड़ी शुभ आई, गुरु की आज्ञा गुरु ने पाई।
राजस्थान धरा अति पावन, नगर बाँसवाड़ा का आँगन।।

बारह-बारह दो हजार दस, रविवार दिन भक्त कई सहस।
मार्गशीर्ष सुदि सप्तमि उत्सव, सूरीपद का महामहोत्सव।।

गुरु विराग ने 'सूरि' बनाया, जन-जन ने जयकार लगाया।
गुरुवर जिस पथ राह गुजरते, जिनशासन के मेले भरते।।
'योगसार' प्राभृत है नीका, 'अप्पोदया' प्राकृत टीका।
लिख गुरु ने इतिहास रचाया, जिनश्रुत का सम्मान बढ़ाया।।

क्षेत्र अहार महा सुखदाई, शान्तिभक्ति गुरु सिद्धि पाई।
यक्षों ने तब चँवर ढुराये, गुरुवर के जयकार लगाये।।
संकट मोचन तारणहारे, गुरु मंत्र के अतिशय न्यारे।
जो भी श्रद्धा से ध्याता है, हर दुख संकट खो जाता है।।

आगम अध्यातम का संगम, गुरुचर्या में दिखता हरदम।
शिष्यों को सन्मार्ग दिखाते, अनुशासन का पाठ सिखाते।।
शांत, सहज, अति सरल स्वभावी, हों गुरुवर तीर्थंकर भावी।
जब तक हैं ये चाँद सितारे, चिर आयुष हों गुरु हमारे।।

दोहा

गुरु चालीसा भाव से, पढ़े सुनें चित लाय।
परम यशस्वी हो यहाँ, परभव में यश पाय।।
गुरु भक्ति गुरु प्रार्थना, नि:श्रेयस सुखदाय।
जनम मरण को नाशकर, नर 'विचिन्त्य' फल पाय।।



# जिनवाणी स्तुति

रचयिता - श्रमणाचार्य विमर्शसागर

माँ-ओ माँ, माँ-ओ माँ-2
भव सागर से तारण हारी, ओ जिनवाणी माँ-2
तू है हमको सबसे प्यारी, ओ जिनवाणी माँ
माँ-ओ माँ, माँ-ओ माँ-2
शरणा में तेरी, जो भी आता है
सच्ची सुखशान्ति, वो नर पाता है
खुशियाँ मिलती हैं, जीवन में हरपल
यादें रहती हैं, चेतन की पलपल
भव-भव में भी हो उपकारी, ओ जिनवाणी माँ-2
तू है हमको सबसे प्यारी, ओ जिनवाणी माँ
माँ-ओ माँ, माँ-ओ माँ-2
सात तत्त्व, छह द्रव्य, महिमा बतलाती
तू ज्ञायक प्रभु है, हमको सिखलाती
बंध-आत्मा में, अन्तर बतलाया
भेदज्ञान करना, हमको सिखलाया
बना दिया आत्मविहारी, ओ जिनवाणी माँ
तू है हमको सबसे प्यारी, ओ जिनवाणी माँ

माँ–ओ माँ, माँ–ओ माँ–2
आतम अनुभव की लोरी गाती हो
जन्म जरा मृत्यु, रोग नशाती हो
माँ जग में तुझ सा, कोई न हितकारी
वीतराग विज्ञान तेरी बलिहारी
तीर्थंकर मुख से अवतारी, ओ जिनवाणी माँ
तू है हमको सबसे प्यारी, ओ जिनवाणी माँ
माँ–ओ माँ, माँ–ओ माँ–2

## अनंत संसारी कौन?

जे पुण गुरुपडिणीया बहुमोहा ससबला कुसीला य।
असमाहिणा मरंते ते होंति अणंतसंसारा।।71।।
श्री मूलाचारजी

जो पुन: गुरु के प्रतिकूल हैं, मोह की बहुलता से सहित हैं, शबल–अतिचार सहित चारित्र पालते हैं, कुत्सित आचरण वाले हैं वे असमाधि से मरण करते हैं और अनंत संसारी हो जाते हैं।



## जैन पर्व

* जैन नववर्ष (वीर निर्वाण संवत्) : कार्तिक कृष्ण अमावस्या
* भगवान आदिनाथ ज्ञानकल्याणक : फाल्गुन कृष्ण एकादशी
* जिनागम पंथ दिवस: फाल्गुन कृष्ण एकादशी
* आष्टाह्निका पर्व : कार्तिक शुक्ल अष्टमी से कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा तक
  : फाल्गुन शुक्ल अष्टमी से फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा तक
  : आषाढ़ शुक्ल अष्टमी से आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा तक
* आदिनाथ जयंती : चैत्र कृष्ण नवमी
* महावीर जयंती : चैत्र शुक्ल त्रयोदशी
* अक्षय तृतीया : वैशाख शुक्ल तृतीया
* भगवान शांतिनाथ : ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी

जन्म–तप–मोक्ष कल्याणक

* श्रुत पंचमी पर्व : ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी
* गुरु पूर्णिमा : आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा
* वीर शासन जयंती : श्रावण कृष्ण प्रतिपदा
* मोक्ष सप्तमी : श्रावण शुक्ल सप्तमी

* रक्षाबंधन पर्व : श्रावण शुक्ल पूर्णिमा
* पर्यूषण पर्व : 1. भाद्रपद शुक्ल पंचमी से भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी तक
  2. माघ शुक्ल पंचमी से माघ शुक्ल चतुर्दशी तक
  3. चैत्र शुक्ल पंचमी से चैत्र शुक्ल चतुर्दशी तक
* क्षमावाणी पर्व : आश्विन कृष्ण एकम्
* दीपावली पर्व : कार्तिक कृष्ण अमावस
(भगवान महावीर निर्वाण दिवस)
* भगवान चन्द्रप्रभ : पौष कृष्ण एकादशी
और पार्श्वनाथ–जन्म तप कल्याणक महोत्सव

## दैनिक रसी व्रत

| | | |
|---|---|---|
| रविवार | – | नमक |
| सोमवार | – | हरी |
| मंगलवार | – | मीठा |
| बुधवार | – | घी |
| गुरुवार | – | दूध |
| शुक्रवार | – | दही |
| शनिवार | – | तेल |



## जाप्य मंत्र

1. 35 अक्षरों का मंत्र
**णमो अरिहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।**
**णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।**

2. 16 अक्षरों का मंत्र
**अरहंत सिद्ध आइरिया उवज्झाया साहू**

3. 6 अक्षरों के मंत्र
**(1) अरहंत सिद्ध (2) अरहन्त सि सा**
**(3) ओं नमः सिद्धेभ्यः (4) नमोऽर्हत्सिद्धेभ्यः**

4. 5 अक्षरों के मंत्र
**अ सि आ उ सा**

5. 4 अक्षरों के मंत्र
**(1) अरहन्त (2) अ सि साहू**

6. 2 अक्षरों के मंत्र
**(1) सिद्ध (2) अ आ (3) ओं ह्रीं**

7. 1 अक्षर का मंत्र – **ओम्**

लघु शान्ति मंत्र

**ॐ ह्रों अर्हं असिआउसा सर्वशान्तिं कुरुत कुरुत स्वाहा।**

वेदी प्रतिष्ठा, कलशारोहण तथा बिम्ब स्थापना के समय का जाप्य मंत्र

**ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं असिआउसा अनाहत विद्यायै अरिहन्ताणं ह्रीं सर्वशान्तिं कुरुत कुरुत स्वाहा।**

मंगलदायक मंत्र

**ओं ह्रीं वरे सुवरे असिआउसा नमः**

एकान्त में प्रतिदिन 108 बार धूप के साथ, शुद्ध भाव पूर्वक जपें।

ऐश्वर्यदायक मंत्र

**ॐ ह्रीं असिआउसा नमः स्वाहा।**

सूर्योदय के समय पूर्व दिशा में मुख करके प्रतिदिन 108 बार शुद्ध भाव से जपें।

सर्वसिद्धिदायक मंत्र

**ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं अर्हं श्री वृषभनाथ–तीर्थंकराय नमः**



समस्त कार्यों की सिद्धि के लिए प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक 108 बार जाप करना है।

सर्वग्रह शान्ति मंत्र–प्रातः काल जप करें।

**ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्व–शान्तिं–कुरु कुरु स्वाहा।**

रोग निवारक मंत्र

**ॐ ह्रीं सकल–रोगहराय श्री सन्मति देवाय नमः**

शान्ति कारक मंत्र

**ॐ ह्रीं परमशान्ति विधायक श्री शान्तिनाथाय नमः**

जाप शुद्धि मंत्र

**ॐ ह्रीं रत्नैः स्वर्णैसूतैर्बीजैःरचितां जपमालिका सर्व जपेसु सर्वाणिवांछितानि प्रयच्छंतुः**

शान्ति मंत्र

**ॐ ह्रीं जगच्छान्तिकराय श्री शान्तिनाथाय नमः सर्वोपद्रव शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा**

# जिनागम पंथी आचार्य परम्परा संक्षिप्त परिचय

## आचार्य श्री आदिसागर जी महामुनिराज

जन्म – भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी (सन्–1866)
दीक्षा – मार्गशीर्ष शुक्ल द्वितीया (सन्–1913)
आचार्य पद – ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी (श्रुत पंचमी) (सन्–1915)
समाधि – फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी (सन्–1943)

## आचार्य श्री महावीरकीर्ति जी महामुनिराज

जन्म – वैशाख कृष्ण नवमी (सन्–1910)
दीक्षा – फाल्गुन शुक्ल एकादशी (सन्–1943)
आचार्य पद – आश्विन शुक्ल दशमी (सन्–1943)
समाधि – माघ कृष्ण षष्ठी (सन्–1972)

## आचार्य श्री विमलसागर जी महामुनिराज

जन्म – आश्विन कृष्ण सप्तमी (सन्–1915)
दीक्षा – फाल्गुन शुक्ल त्रयोदशी (सन्–1952)
आचार्य पद – मार्गशीर्ष कृष्ण द्वितीया (सन्–1960)
समाधि – पौष कृष्ण द्वादशी (सन्–1994)



## आचार्य श्री सन्मतिसागर जी महामुनिराज

जन्म – माघ शुक्ल सप्तमी (सन्–1938)
दीक्षा – कार्तिक शुक्ल द्वादशी (सन्–1962)
आचार्य पद – माघ कृष्ण तृतीया (सन्–1972)
समाधि – माघ कृष्ण चतुर्थी (सन्–2010)

## आचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज

जन्म – वैशाख शुक्ला नवमी, 2 मई, 1963
मुनि दीक्षा – मार्गशीर्ष शुक्ला पंचमी, 9 दिसम्बर, 1983
आचार्य पद – कार्तिक शुक्ला 13, 8 नवम्बर, 1992

## आचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज

जन्म – मार्गशीर्ष कृष्णा पंचमी, संवत् 2030
15 नवम्बर 1973, दिन–गुरुवार
मुनि दीक्षा – पौष कृष्णा 11, संवत् 2055
दिनांक 14 दिसम्बर 1998
आचार्य पद – मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी संवत् 2067
दिनांक 12 दिसम्बर 2010, दिन–रविवार

## गुरुदेव की चेतन कृतियाँ

### जिनागम पंथी मुनि संघ

1. मुनि श्री विचिन्त्यसागर जी
2. मुनि श्री विजेयसागर जी
3. मुनि श्री विश्वार्यसागर जी
4. मुनि श्री विध्रुवसागर जी
5. मुनि श्री विव्रतसागर जी
6. मुनि श्री विशुभ्रसागर जी
7. मुनि श्री विशमसागर जी
8. मुनि श्री विश्वांकसागर जी
9. मुनि श्री विश्वाक्षसागर जी
10. मुनि श्री विश्वार्कसागर जी
11. मुनि श्री विश्वांशसागर जी
12. मुनि श्री विगम्यसागर जी
13. मुनि श्री विश्वगसागर जी
14. मुनि श्री विश्वार्थसागर जी
15. क्षुल्लक श्री विश्वाभसागर जी

### जिनागम पंथी आर्यिका संघ

1. आर्यिका विद्यान्तश्री माताजी
2. आर्यिका विमलांतश्री माताजी
3. आर्यिका विक्रांतश्री माताजी
4. आर्यिका विश्वांतश्री माताजी
5. आर्यिका विध्वांतश्री माताजी
6. आर्यिका विजयांतश्री माताजी
7. आर्यिका विभ्रांतश्री माताजी
8. आर्यिका विनयांतश्री माताजी
9. आर्यिका विजितांतश्री माताजी
10. क्षुल्लिका विदेहांतश्री माताजी
11. क्षुल्लिका विप्रांतश्री माताजी
12. क्षुल्लिका विदीक्षांतश्री माताजी

### जिनागम पंथी त्यागीवृती

बा.ब्र. विशु दीदी, बा.ब्र. नेहा दीदी, बा.ब्र. ज्योति दीदी, बा.ब्र. महिमा दीदी
बा.ब्र. सोनाली दीदी, बा.ब्र. सृष्टि दीदी, बा.ब्र. दीपा दीदी, बा.ब्र. रिया दीदी
बा.ब्र. गुंजन दीदी, ब्र. रीता दीदी, बा.ब्र. प्रतीक्षा दीदी

ब्र. प्रवीण भैया जी
बा. ब्र. विनम्र भैयाजी

### समाधिस्थ संयमी

मुनि श्री विश्वतीर्थसागर जी, मुनि श्री विश्वभूसागर जी, मुनिश्री विश्वज्ञसागर जी
आर्यिका विलक्ष्यश्री माताजी, आर्यिका विहांतश्री माताजी



## जिनागम पंथी श्रावक की दिनचर्या

* प्रात:काल उठकर मन ही मन पंचपरमेष्ठी मंत्र का स्मरण करें।
* यथायोग्य शारीरिक शुद्धि के बाद सुप्रभात स्तोत्र आदि पाठ पढ़ें।
* नित्य दैनिक क्रियाओं से निर्वृत्त होकर शुद्ध वस्त्र पहनकर जिनमंदिर जावें और विधिपूर्वक जिनमंदिर में प्रवेश करें।
* जिनेन्द्र भगवान का भावपूर्वक दर्शन के पश्चात् शुद्ध जल से अथवा पंचामृत अभिषेक करें और सुसज्जित अष्ट द्रव्यों से भक्तिभाव से जिनेन्द्र भगवान की पूजा रचावें।
* जिनागम पंथी श्रावक जिनपूजा के पश्चात् एकाग्रमन से जिनागम का स्वाध्याय करें।
* तदनंतर नगर में कोई गुरु होवें तो आहारदान देवें अथवा सभी सुपात्रों के निरंतराय आहारचर्या की अनुमोदना करें।
* पंच परमेष्ठी मंत्र के स्मरण पूर्वक मौन रहकर भोजन करें।
* संध्याबेला में जिनमंदिर जाकर जिनदर्शन, गुरुवंदना, आरती आदि धर्मानुष्ठान करें।
* अनंतर मंत्र जाप, स्तोत्र पाठ, ध्यान और सभी श्रावक श्राविका एकत्रित होकर स्वाध्याय–वचनिका के लिए बैठें।
* पुन: घर पहुँचकर परिवार के साथ बैठकर धर्मचर्चा करके पंच परमेष्ठी मंत्र का स्मरण करते हुए विश्राम करें।

## श्री चौबीस तीर्थंकरों की पंचकल्याणक तिथियाँ

**हर एक श्रावक नीचे लिखे दिनों में कल्याणक पाठ सहित पूजन और स्वाध्याय जरूर करें।**
**इससे अतिशय पुण्य और लाभ की प्राप्ति होती है।**

| क्र. | तीर्थंकर | गर्भ | जन्म | तप | केवलज्ञान | मोक्ष |
|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | श्री आदिनाथ जी (श्री ऋषभदेव) | आषाढ़ वदी २ | चैत्र वदी ९ | चैत्र वदी ९ | फाल्गुन वदी ११ | माघ वदी १४ |
| २ | श्री अजितनाथ जी | ज्येष्ठ वदी १५ | माघ सुदी १० | माघ सुदी १० | पौष सुदी ११ | चैत्र वदी ५ |
| ३ | श्री संभवनाथ जी | फाल्गुन सुदी ८ | कार्तिक सुदी १५ | मार्गशीर्ष सुदी १५ | कार्तिक वदी ४ | चैत्र सुदी ६ |
| ४ | श्री अभिनंदननाथ जी | बैशाख सुदी ६ | माघ सुदी १२ | माघ सुदी १२ | पौष सुदी १४ | बैशाख सुदी ६ |
| ५ | श्री सुमतिनाथ जी | सावन सुदी २ | चैत्र सुदी ११ | बैशाख सुदी ९ | चैत्र सुदी ११ | चैत्र सुदी ११ |
| ६ | श्री पद्मप्रभ जी | माघ वदी ६ | कार्तिक वदी १३ | कार्तिक सुदी १३ | चैत्र सुदी १५ | फाल्गुन वदी ४ |
| ७ | श्री सुपार्श्वनाथ जी | भादो सुदी ६ | ज्येष्ठ सुदी १२ | ज्येष्ठ सुदी १२ | फाल्गुन वदी ६ | फाल्गुन वदी ७ |
| ८ | श्री चंद्रप्रभ जी | चैत्र वदी ५ | पौष वदी ११ | पौष वदी ११ | फाल्गुन वदी ७ | फाल्गुन सुदी ७ |
| ९ | श्री पुष्पदंत जी | फाल्गुन वदी ९ | मार्गशीर्ष सुदी १ | मार्गशीर्ष सुदी १ | कार्तिक सुदी २ | भादों सुदी ८ |
| १० | श्री शीतलनाथ जी | चैत्र वदी ८ | माघ वदी १२ | माघ वदी १२ | पौष वदी १४ | आश्विन सुदी ८ |



| क्र. | तीर्थंकर | गर्भ | जन्म | तप | केवलज्ञान | मोक्ष |
|---|---|---|---|---|---|---|
| ११ | श्री श्रेयांसनाथ जी | ज्येष्ठ वदी ६ | फाल्गुन वदी ११ | फाल्गुन वदी ११ | माघ वदी १५ | सावन सुदी १५ |
| १२ | श्री वासुपूज्य जी | आषाढ़ वदी ६ | फाल्गुन वदी १४ | फाल्गुन वदी १४ | माघ सुदी २ | भादों सुदी १४ |
| १३ | श्री विमलनाथ जी | ज्येष्ठ वदी १० | माघ सुदी ४ | माघ सुदी ४ | माघ सुदी ६ | आषाढ़ सुदी ६ |
| १४ | श्री अनंतनाथ जी | कार्तिक वदी १ | ज्येष्ठ वदी १२ | ज्येष्ठ वदी १२ | चैत्र वदी १५ | चैत्र वदी १५ |
| १५ | श्री धर्मनाथ जी | बैशाख सुदी ८ | माघ सुदी १३ | माघ सुदी १३ | पौष सुदी १५ | ज्येष्ठ सुदी ४ |
| १६ | श्री शांतिनाथ जी | भादों वदी ७ | ज्येष्ठ वदी १४ | ज्येष्ठ वदी १४ | पौष सुदी १० | ज्येष्ठ वदी १४ |
| १७ | श्री कुंथुनाथ जी | सावन वदी १० | बैशाख सुदी १ | बैशाख सुदी १ | चैत्र सुदी ३ | बैशाख सुदी १ |
| १८ | श्री अरनाथ जी | फाल्गुन सुदी ३ | मार्गशीर्ष सुदी १४ | मार्गशीर्ष सुदी १० | कार्तिक सुदी १२ | चैत्र वदी १५ |
| १९ | श्री मल्लिनाथ जी | चैत्र सुदी १ | मार्गशीर्ष सुदी ११ | मार्गशीर्ष सुदी ११ | पौष वदी २ | फाल्गुन सुदी ५ |
| २० | श्री मुनिसुव्रतनाथ जी | सावन सुदी २ | बैशाख वदी १० | बैशाख वदी १० | बैशाख वदी ९ | फाल्गुन वदी १२ |
| २१ | श्री नमिनाथ जी | आश्विन वदी २ | आषाढ़ वदी १० | आषाढ़ वदी १० | मार्गशीर्ष सुदी ११ | बैशाख वदी १४ |
| २२ | श्री नेमिनाथ जी | कार्तिक सुदी ६ | सावन सुदी ६ | सावन सुदी ६ | आश्विन सुदी १ | आषाढ़ सुदी ७ |
| २३ | श्री पार्श्वनाथ जी | बैशाख वदी २ | पौष वदी ११ | पौष वदी ११ | चैत्र वदी ४ | सावन सुदी ७ |
| २४ | श्री महावीर जी | आषाढ़ सुदी ६ | चैत्र सुदी १३ | मार्गशीर्ष वदी १० | बैशाख सुदी १० | कार्तिक वदी १५ |

वदी = कृष्ण, सुदी = शुक्ल, आश्विन = आसौज, क्वांर, मार्गशीर्ष = मंगसिर, अगहन, भादों = भाद्रपद

## दिन का चौघड़िया

| समय | रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 6-7.30 | उद्वेग | अमृत | रोग | लाभ | शुभ | चल | काल★ |
| 7.30-9 | चल | काल★ | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ | शुभ |
| 9-10.30 | लाभ | शुभ | चल | काल | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ |
| 10.30-12 | अमृत | रोग★ | लाभ | शुभ | चल | काल★ | उद्वेग★ |
| 12-1.30 | काल★ | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ | शुभ | चल |
| 1.30-3 | शुभ | चल | काल★ | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ |
| 3-4.30 | रोग★ | लाभ | शुभ | चल | काल★ | उद्वेग★ | अमृत |
| 4.30-6 | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ | शुभ | चल | काल★ |

## रात्रि का चौघड़िया

| समय | रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 6-7.30 | शुभ | चल | काल★ | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ |
| 7.30-9 | अमृत | रोग★ | लाभ | शुभ | चल | काल★ | उद्वेग★ |
| 9-10.30 | चल | काल★ | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ | शुभ |
| 10.30-12 | रोग★ | लाभ | शुभ | चल | काल★ | उद्वेग★ | अमृत |
| 12-1.30 | काल★ | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ | शुभ | चल |
| 1.30-3 | लाभ | शुभ | चल | काल★ | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ |
| 3-4.30 | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ | शुभ | चल | काल★ |
| 4.30-6 | शुभ | चल | काल★ | उद्वेग★ | अमृत | रोग★ | लाभ |

नोट:- ★ निशान वाले चौघड़िया अशुभ समझिये।

# कहो गर्व से हम जिनागम पंथी हैं।

जिनागम पंथ, प्रकाशन

...शास्त्र विक्रय... ज्ञानावरणस्यास्रवा:
शास्त्र विक्रय ज्ञानावरण कर्म के आस्रव का कारण है।
(आचार्य अकलंक देव, राजवार्तिक)

**NOT FOR SALE**